चतुर्भुज-नाट्य-साहित्य

१.	कलिंग-विजय	—	२.५०
२.	श्रीकृष्ण	—	२.५०
३.	मेघनाद	—	२.५०
४.	सिराजुद्दौला	—	२.५०
५.	मीरक़ासिम	—	२.५०
६.	अरावली का शेर	—	२.५०
७.	कर्ण	—	२.५०
८.	कुँवरसिंह	—	२.५०
९.	भगवान बुद्ध	—	२.५०
१०.	कृष्णकुमारी	—	२.५०
११.	कंस-वध	—	२.५०
१२.	पाटलीपुत्र का राजकुमार	—	२.५०
१३.	मोर्चे पर	—	२.५०
१४.	बहादुरशाह	—	२.५०
१५.	झेलम के किनारे (एकांकी-संग्रह)	—	२.५०
१६.	विजय-तिलक (एकांकी-संग्रह)	—	२.५०
१७.	झाँसी की रानी	—	२.५०
१८.	भीष्म-प्रतिज्ञा	—	२.५०
१९.	इतिहास बोल उठा (लेख-संग्रह)	—	२.५०
२०.	कमरे की छाया (कहानी-संग्रह)	—	२.५०
२१.	बेख़बर जो की शादी (प्रहसन। ले० अनंत कुमार)		१.५०

× ×

प्राप्ति-स्थान

१ मगध कलाकार प्रकाशन, १०६ श्रीकृष्ण नगर, पटना-१ (बिहार)

२ साधना मन्दिर, नया टोला, पटना-४

३ दिल्ली पुस्तक सदन, गोविन्द मित्रा रोड, पटना-४

आवरण मुद्रक—हिन्द आर्ट कॉटेज, पटना—४

भीष्म-प्रतिज्ञा

— चतुर्भुज, एम० ए०



चतुर्भुज, एम० ए०

परिचय

जन्म १९२८ ई०। स्कूली शिक्षा प्राप्त कर जीविकोपार्जन में लग गये। प्राइवेट रूप से आई० ए०, बी० ए० और एम० ए० की परीक्षायें पास कीं। नालन्दा में रह कर बौद्ध साहित्य का अध्ययन किया। हिन्दी में रंगमंचीय नाटकों का अभाव देख कर नाटक-लेखन और अभिनय की ओर प्रवृत्त हुए। 'मगध कलाकार' नामक सांस्कृतिक नाट्य संस्था की स्थापना की। 'मीरक़ासिम' पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत। रेलवे की सेवा की। फिर नव नालन्दा महाविहार (नालन्दा) में रहे। इन दिनों आकाशवाणी की सेवा कर रहे हैं। रंगमंच के सफल लेखक, निर्देशक और कलाकार के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त की।

DIRECTOR,
MAGADH ARTISTS
PATNA
MAGADH ARTISTS,
106, Shree Krishna Nagar
PATNA-1 (BIHAR)

यतो धर्मस्ततः कृष्णो, यतः कृष्णस्ततो जयः

भीष्म-प्रतिज्ञा

(पौराणिक नाटक)

लेखक

चतुर्भुज, एम० ए०

मगध कलाकार प्रकाशन,

१०६, श्रीकृष्ण नगर, पटना-१ (बिहार)

मूल्य—द रुपये पचास पैसे

प्रकाशक :
अशोक प्रियदर्शी,
मगध कलाकार प्रकाशन,
१०६, श्रीकृष्ण नगर, पटना—१ (बिहार)

द्वितीय संस्करण
१९७१ ई०

सर्वाधिकार लेखकाधीन

मुद्रक:—
हुँकार प्रेस,
पटना—१

अपनी बात

(प्रथम संस्करण से)

मेरे विचार से महाभारत में भीष्म के महान महत् चरित्र और कोई नहीं है। हस्तिनापुर-नरेश शान्तनु की पत्नी 'गंगा' के गर्भ से भीष्म का जन्म हुआ था। इनका प्रारम्भिक नाम देवव्रत था। बाद में शान्तनु 'सत्यवती' पर मोहित हो गये। लेकिन धीवरराज की शर्त थी कि यदि सत्यवती के गर्भ से उत्पन्न पुत्र उत्तराधिकारी हो तो विवाह हो सकता है। देवव्रत ने प्रतिज्ञा की कि न तो ये सिंहासन पर बैठेंगे, न विवाह करेंगे। इस भीषण प्रतिज्ञा और महात्याग के कारण देवव्रत 'भीष्म' कहलाये और पिता ने इन्हें इच्छामृत्यु का वर दिया।

बाद में काशीराज की कन्या अम्बा ने शिव को प्रसन्न करके भीष्म-वध का वरदान पाया। महाभारत-युद्ध में भीष्म मरे नहीं, बल्कि उनका पतन हुआ। महाभारत-युद्ध के बाद अपनी इच्छा से उन्होंने मृत्युलाभ किया।

प्रस्तुत नाटक केवल नौ दृश्यों में है। नाटक में भीष्म तथा अम्बा के प्रसंग से सम्बन्धित घटनायें मुख्य रूप से दी गई हैं। प्रारम्भ के दृश्य में भीष्म (देवव्रत) तरुण के रूप में, बीच के दृश्यों में प्रौढ़ के रूप में तथा अन्त के दो दृश्यों में पितामह के रूप में चित्रित किये गये हैं।

नाटक में एक स्त्री-चरित्र (अम्बा) है। नाटक में सिर्फ एक गीत है जो हिन्दी के प्रसिद्ध कवि श्री सत्यदेव नारायण अष्ठाना की रचना है। मैं अष्ठाना जी, अनन्त कुमार जी, अशोक प्रियदर्शी जी तथा हुँकार प्रेस के अधिकारियों का कृतज्ञ हूँ जिनलोगों ने इस पुस्तक के शीघ्र प्रकाशन में सहायता दी है।

—चतुर्भुज
१४-५-७०

भीष्म-प्रतिज्ञा

पात्र-परिचय

महादेव	—	देवादिदेव
श्रीकृष्ण	—	योगेश्वर; द्वारिकाधीश
परशुराम	—	भीष्म के गुरु
शान्तनु	—	हस्तिनापुर-नरेश
सुबन्धु	—	शान्तनु के मन्त्री
देवव्रत (भीष्म)	—	शान्तनु के पुत्र
विचित्रवीर्य	—	शान्तनु के पुत्र
शाल्व	—	सौभराज
दुर्योधन	—	कुरुराज
अर्जुन	—	तृतीय पाण्डव
शिखण्डी	—	द्रुपद के पुत्र
धीवरराज	—	धीवरों के सरदार
अम्बा	—	काशीराज की कन्या

—:o:—

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान—हस्तिनापुर का राजमहल।

समय—प्रभात।

(हस्तिनापुर के महाराज शान्तनु चिन्तित भाव में टहल रहे हैं।)

शान्तनु : कैसा था वह रूप! नदी के वक्ष पर खेलती नौका पर सवार वह रमणी गीत गा रही थी। सूर्य की किरणें उसके मुख-मंडल पर चमक रही थीं। वह जैसे कवि की कल्पना हो, रात में खिली कली हो, संगीत की मधुर तान हो। उसकी मुस्कुराहट में बाल-सुलभ भोलापन था। कौन थी वह? वह स्वर्ग की देवी थी या मृत्युलोक की प्रेम-प्रतिमा? जब से उसे देखा है, मेरा मन चंचल हो उठा है। *(फिर टहलने लगते हैं। रुक कर)* उसे प्राप्त करना होगा। लेकिन कैसे? हस्तिनापुर का सम्राट् शान्तनु आज उस नारी के प्रेम का भिक्षुक बन गया है।

(इसी बीच मन्त्री सुबन्धु का प्रवेश। सम्राट् को चिन्तित देख कर मन्त्री भी चिन्तित भाव में एक ओर खड़े हो जाते हैं। थोड़ी देर बाद शान्तनु की नजर मन्त्री पर पड़ती है और वह संयत होने का प्रयत्न करते हैं।)

शान्तनु : कौन ? मन्त्री सुबन्धु ?—तुम कब से यहाँ खड़े हो मित्र ?

सुबन्धु : अभी—अभी आया हूँ।

शान्तनु : तुम उदास हो। कारण ?

सुबन्धु : नहीं सम्राट्!—मैं उदास नहीं हूँ।

शान्तनु : तुम झूठ बोलते हो।

सुबन्धु : आप क्यों उदास हैं ?

शान्तनु : (*फिर दुखी*) तुम क्या इसका कारण नहीं जानते ?

सुबन्धु : जानता हूँ। काश, नहीं जान पाता !

शान्तनु : मित्र, तुमसे मेरा हाल छिपा नहीं है। मैं सम्राट् हूँ, तुम मेरे अधीनस्थ मंत्री हो। लेकिन मैंने सदा तुम्हें अपना मित्र माना है। अपना दुःख-सुख सब कुछ तुम्हें बताया है। मेरे गुण और अवगुण भी तुम से छिपे नहीं हैं।

सुबन्धु : आपने मुझे सखा के रूप में माना है। यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है। यदि अपने प्राण देकर भी मैं आपके दुख को दूर कर सकता तो मुझे बड़ी खुशी होती।

शान्तनु : सुबन्धु, तुमने उस रमणी का पता लगाया ?

सुबन्धु : हाँ सम्राट्!

शान्तनु : कौन है वह सुन्दरी ?

सुबन्धु : वह एक धीवर की कन्या है। वह मत्स्यगन्धा है।

शान्तनु : मत्स्यगन्धा ?

सुबन्धु : हाँ, लोग कहते हैं कि उसके शरीर से मछली की गन्ध आती है।

शान्तनु : नहीं मित्र, नहीं। उसके शरीर से चन्दन की सुगन्ध आती है। जब वह नौका-विहार कर रही थी तो उसके आसपास का वायुमंडल सुगन्ध बिखेर रहा था।

सुबन्धु : यह आपका प्रेम बोल रहा है।

शान्तनु : उसका नाम क्या है ?

सुबन्धु : सत्यवती।

शान्तनु : सत्यवती! हाँ, उसका नाम सत्यवती होगा। उस सुन्दर रमणी का नाम इससे कम नहीं हो सकता। सुबन्धु! तुमने उसके पिता से बातें कीं ?

सुबन्धु : हाँ, कीं।

शान्तनु : परिणाम ?

सुबन्धु : उसकी शर्त्त बड़ी टेढ़ी है।

शान्तनु : टेढ़ी शर्त्त ?

सुबन्धु : हाँ सम्राट्। सुनकर मुझे बड़ा क्रोध आया।

शान्तनु : तुमने उसे कोई अपशब्द तो नहीं कहा।

सुबन्धु : कहना चाहता था, पर उसी समय आपका दुखी क्लान्त मुखमंडल याद आया। क्रोध की घूँट पीकर रह गया।

शान्तनु : तुमने अच्छा किया। लेकिन उसकी टेढ़ी शर्त्त क्या है ?

सुबन्धु : शायद आप भी उसे सुनकर प्रसन्न न होंगे।

शान्तनु : कुछ बताओ भी।

सुबन्धु : सत्यवती का बाप—वह क्षुद्र धीवर—कहता है कि उस लड़की से उत्पन्न पुत्र ही हस्तिनापुर का भावी सम्राट् हो। यदि यह शर्त्त स्वीकार हो तो वह अपनी कन्या आपको दे सकता है।—क्या यह शर्त्त टेढ़ी नहीं है ?

शान्तनु : हाँ, टेढ़ी है। तुमने उससे क्या कहा ?

सुबन्धु : मैंने कहा कि सम्राट् शान्तनु के ज्येष्ठ पुत्र देवव्रत हैं। उनका हक वे किसी को नहीं दे सकते।

शान्तनु : तुमने ठीक कहा सुबन्धु। देवव्रत हस्तिनापुर का भावी सम्राट् है। मैं अन्याय नहीं कर सकता।

सुबन्धु : उसके बाद उस धीवर ने कहा कि तब तो मैं सम्राट् को अपनी कन्या नहीं दे सकता।

शान्तनु : सुबन्धु!— तुम नहीं जानते—आज से कई वर्ष पहले की बात है। भाग्य ने उस बार भी मेरी परीक्षा ली थी। नदी-तीर पर मैंने एक नारी देखी थी। मैं उसके मोहपाश में बंध गया। उसकी शर्त्त थी कि मैं उसके किसी काम का विरोध न करूँ। मैंने मान लिया। वह राजमहिषी बन कर आई। एक-एक कर उससे छै पुत्र हुए। उन्हें वह नदी की धारा में फेंक आई। जब सातवें पुत्र को फेंकने चली तो मुझसे रहा न गया, मैंने विरोध किया। उसने उसी समय मेरा साथ छोड़ दिया और पुत्रसमेत नदी की तेज धारा में लुप्त हो गई। सात साल के बाद एक रोज आकर उसने पुत्र को लौटा दिया और फिर हमेशा के लिए चली गयी।

सुबन्धु : आश्चर्य!

शान्तनु : जानते हो, कौन थी वह नारी और कौन था वह बालक?

सुबन्धु : कौन था?

शान्तनु : वह नारी थी 'गंगा' जो शापग्रस्त होकर इस पृथ्वी पर आयी थी। और वह पुत्र था देवव्रत जो आज हस्तिनापुर के महल में है।—देवव्रत सभी विद्याओं में पारंगत है। मैं उसके लिए सब कुछ परित्याग कर सकता हूँ।

सुबन्धु : आपका कहना सही है सम्राट्। लेकिन फिर आपकी इस विरह-व्यथा का निदान क्या होगा?

शान्तनु : विरह-व्यथा?—मित्र, इसका निदान अब असम्भव है। मैं देवव्रत का पिता हूँ। उसके लिए इससे भी अधिक कष्ट झेल सकता हूँ। तुमसे मेरा एक निवेदन है।

सुबन्धु : कैसा निवेदन?

शान्तनु : देवव्रत को इसके सम्बन्ध में कुछ न कहना।

सुबन्धु : नहीं सम्राट्, कुछ भी नहीं कहूँगा।

शान्तनु : उधर देखो, देवव्रत आ रहा है। मैं जाता हूँ।

(प्रस्थान)

सुबन्धु : सम्राट् अपनी विरह-व्यथा को गुप्त रखना चाहते हैं। लेकिन प्रेम की आग क्या छिपी रह सकती है? जब आग है तो धुआँ होगा ही।

(देवव्रत का प्रवेश)

देवव्रत : मन्त्री जी, पिताजी कहाँ चले गये? अभी तो यहीं पर थे।

सुबन्धु : युवराज, सम्राट् महल के भीतर गये हैं।

देवव्रत : महल के भीतर? उन्होंने मुझे आते देखा तो था—क्यों?

सुबन्धु : हाँ, देखा था।

देवव्रत : फिर कैसे चले गये ?—ऐसा तो उन्होंने कभी नहीं किया। क्या वे मुझसे रुष्ट हैं ?

सुबन्धु : नहीं राजकुमार। आप जैसे योग्य पुत्र से कौन पिता रुष्ट रह सकता है ?

देवव्रत : तब फिर वे चले क्यों गये ?

सुबन्धु : (*ठंढी साँस लेकर*)—यही तो मैं भी समझ नहीं पाया। आखिर वे चले क्यों गये ?

देवव्रत : क्या वे अस्वस्थ हैं ?

सुबन्धु : ऐसा तो नहीं लगता।

देवव्रत : तो फिर·····

सुबन्धु : युवराज, आप इतने परेशान क्यों हैं ? इसमें चिन्ता की कौन सी बात है ?—कुछ काम उन्हें याद आया होगा। शायद इसीलिए चले गये। सम्भव है, शीघ्र ही लौट भी आयें।

देवव्रत : मंत्री जी, आप नहीं जानते। वे मेरे पिता ही नहीं, माता भी हैं। मैंने बचपन में ही माँ को खो दिया था। एक याद है धुमिल-सी। नदी के तट पर धवलवसना एक नारी ने मेरा परिचय उनसे कराया और कहा—'यही तेरे पिता हैं।' फिर वह नारी नदी के जल में छिप गयी। मैं बहुत रोया। लेकिन वह नहीं लौटी। तब से पिताजी ने ही मुझे माँ का प्यार भी दिया। माँ को फिर मैंने कभी नहीं देखा।

सुबन्धु : राजकुमार, कौन थी आपकी माँ ?

देवव्रत : पिताजी कहते हैं कि 'गंगा' मेरी माँ थी। तब से रोज मैं नदी-तट पर जाता हूँ, उस स्थान को देखता हूँ जहाँ लहरों के बीच मेरी माँ लुप्त हो गयी थी। लगता है, किसी रोज मेरी माँ लहरों के भँवर से निकल कर अवश्य आयेगी।

(*सुबन्धु आँखें पोछने लगते हैं*)

देवव्रत : आप रो रहे हैं मन्त्री जी ! नहीं-नहीं, मैं तो यों ही कह रहा था। मुझे क्षमा कीजिये—क्षमा कीजिये।

सुबन्धु : युवराज, आप में देवताओं के समान गुण भरे हैं। आपके नवयौवन के भीतर अटूट शौर्य भरा है, मस्तिष्क में गम्भीर पाण्डित्य है, शरीर पर सुन्दरता की आभा है, हृदय में पुष्प की कोमलता है।

देवव्रत : मन्त्री जी, आप मेरे पूज्य हैं। एक बात पूछता हूँ। क्या आप सच-सच बतायेंगे ?

सुबन्धु : बताऊँगा—अवश्य बताऊँगा।

देवव्रत : पिताजी इधर गुमसुम बने रहते हैं, सभाभवन में नहीं जाते हैं, लोगों से मिलना नहीं चाहते हैं। बात क्या है ?

सुबन्धु : मुझे क्या मालूम ?

देवव्रत : आपको सब कुछ मालूम है।—आपने अभी-अभी सच कहने का अश्वासन दिया है ? क्या आप सच कह रहे हैं ?

सुबन्धु : हाँ, नहीं ·····

देवव्रत : आप शायद दुविधा में हैं। सत्य को प्रकट करना नहीं चाहते।

सुबन्धु : नहीं राजकुमार, नहीं। इस सम्बन्ध में मैं कुछ नहीं कह सकता।

देवव्रत : आप सब कुछ कह सकते हैं। आप पिताजी के साथ रहते हैं। उनके मित्र हैं, उनके मन्त्री भी हैं। आप सब कुछ जानते हैं, लेकिन कहना नहीं चाहते।

सुबन्धु : मैं वचनबद्ध हूँ युवराज। मुझे क्षमा कीजिये।

देवव्रत : वचनबद्ध ?—क्या वह विषय इतना महत्वपूर्ण है ?

सुबन्धु : उसका सम्बन्ध सम्राट् के जीवन से है।

देवव्रत : फिर भी आप मुझसे कहना नहीं चाहते ?—यदि पिताजी की यही दशा रही तो अन्त में क्या होगा—इस पर आपने सोचा है ?—आप तो उनके मन्त्री हैं।

सुबन्धु : मैं वचनबद्ध हूँ युवराज।

देवव्रत : आप अपने वचन की रक्षा कीजिये मन्त्री जी ! लेकिन याद रखिये कि यदि पिताजी को कुछ हो गया तो उसका उत्तरदायित्व आप पर होगा। हस्तिनापुर की जनता आपको दोषी ठहरायेगी।

सुबन्धु : आपने मुझे संकट में डाल दिया। लगता है, मुझे कहना ही पड़ेगा।

देवव्रत : आप मित्र का उत्तरदायित्व निभा रहे हैं, मन्त्री का नहीं। सम्राट् की जीवनरक्षा, साम्राज्य का सुचारु रूप से संचालन—ये भी आप के उत्तरदायित्व हैं।—मैं न तो आपकी उम्र का हूँ, न आपके समान अनुभवी—इसलिए अधिक नहीं कह सकता।

सुबन्धु : तो सुनिये युवराज। आपके पिता—हस्तिनापुर के सम्राट् महाराज शान्तनु—एक धीवरकन्या के प्रेम के शिकार हो गये हैं। धीवर की शर्त्त है कि यदि उसकी कन्या से उत्पन्न पुत्र, सम्राट् का उत्तराधिकारी हो तभी वह विवाह की स्वीकृति देगा। सम्राट् इस शर्त्त को नहीं मानते।

देवव्रत : क्यों नहीं मानते ?

सुबन्धु : आप जैसे योग्य पुत्र के रहते भला वे इस शर्त्त को कैसे मान सकते हैं ?

(देवव्रत सोचने लगते हैं)

सुबन्धु : आप किस सोच में पड़ गये युवराज ?

देवव्रत : वह धीवर कहाँ है ?

सुबन्धु : हस्तिनापुर के महल में।

देवव्रत : मैं उससे मिलना चाहता हूँ।

सुबन्धु : कब ?

देवव्रत : अभी।

सुबन्धु : इतनी जल्दी में उससे मिलना ठीक नहीं जान पड़ता।

देवव्रत : मन्त्री जी, मनुष्य का मन चंचल होता है। मैं अभी कुछ हूँ, कुछ देर बाद बदल भी सकता हूँ। समय खोना व्यर्थ है। यदि उसे आपत्ति न हो तो उपस्थित कीजिये।

सुबन्धु : अच्छी बात है। मैं शीघ्र उसे साथ में लेकर आता हूँ।

(प्रस्थान। देवव्रत टहलने लगते हैं।)

देवव्रत : पिताजी के दुःख को दूर करना होगा। हे ईश्वर! मुझमें शक्ति दो कि मैं कुछ कर सकूँ। माँ जाह्नवी! मेरे हृदय में साहस दो कि मैं अपनी दुर्बलताओं पर विजय पा सकूँ।

(सुबन्धु के साथ धीवर का प्रवेश)

सुबन्धु : धीवर, ये राजकुमार देवव्रत हैं। इन्हें प्रणाम करो।

धीवर : *(प्रणाम करते हुए)* राजकुमार, मैं पहचान न सका। मुझे क्षमा कीजिए।

देवव्रत : आप क्या धीवर हैं?

धीवर : हाँ मैं धीवरों का सरदार हूँ।

देवव्रत : क्या आपकी कोई कन्या है?

धीवर : हाँ, सत्यवती मेरी कन्या है।

देवव्रत : हस्तिनापुर के सम्राट् आपकी कन्या से विवाह करना चाहते हैं। आपको कोई आपत्ति है?

धीवर : राजकुमार, यह तो मेरे लिए सौभाग्य की बात है कि मुझ जैसे एक गरीब की कन्या महल की रानी बनेगी। लेकिन क्षमा करें राजकुमार, मेरी एक शर्त है।

देवव्रत : मैं जानता हूँ।

धीवर : तो ....

देवव्रत : आपकी कन्या से उत्पन्न पुत्र ही हस्तिनापुर का भावी सम्राट् हो। आप यही चाहते हैं।

धीव : जी, आपने ठीक समझा—बिल्कुल ठीक समझा।

देवव्रत : आपकी शर्त मान ली गई।

धीवर : *(उत्सुकता से)* जी, क्या कहा आपने?

देवव्रत : आपकी शर्त मान ली गयी।

सुबन्धु : राजकुमार, यह आप क्या कह रहे हैं? आप अपने भविष्य को नहीं देखते क्या?

देवव्रत : मन्त्री जी, पिताजी के जीवन की तुलना में हस्तिनापुर का राज्य मेरे लिए तिनके के समान है।

सुबन्धु : आप सम्राट् की मर्जी के बिना ....

देवव्रत : मन्त्री जी, मैं स्वेच्छा से अपना अधिकार छोड़ रहा हूँ।

धीवर : लेकिन .....

देवव्रत : अब 'लेकिन' कैसा? आपकी शर्त मान ली गई।

धीवर : क्षमा करें राजकुमार। 'लेकिन' पर भी ध्यान देना होगा।

देवव्रत : आप अपना अभिप्राय स्पष्ट कीजिये।

धीवर : राजकुमार देवव्रत कभी झूठ नहीं बोलते। वे इस शर्त को मानेंगे—इसका मुझे विश्वास है। लेकिन ... लेकिन ....

सुबन्धु : तुम मूर्ख हो धीवर। तुम स्वार्थी हो।

धीवर : राजकुमार, मैं चला जाता हूँ।

देवव्रत : क्षमा कीजिये धीवर-सरदार। आपके 'लेकिन' को मैं जान न सका।

धीवर : मैं कह रहा था कि आप तो ठीक कहते हैं, लेकिन इसका क्या प्रमाण है कि आपकी सन्तान भी इस शर्त को मानेगी? यदि वह बाद में उपद्रव खड़ा कर दे तो क्या होगा?

सुबन्धु : धीवर, तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ रहे हो। यह तुम्हारी नई शर्त्त है!

धीवर : नई शर्त्त ? (हँस कर) बिल्कुल नहीं। उसी शर्त्त से इसका सम्बन्ध है। क्यों राजकुमार ?

देवव्रत : आप ठीक कहते हैं।

धीवर : देखा मन्त्री जी, राजकुमार ने मेरी बात समझ ली, पर आप नहीं समझ पाये।

देवव्रत : धीवर सरदार, अपने वचन को मैं तो पूरा कर सकता हूँ। लेकिन दूसरों का जिम्मा मैं कैसे ले सकता हूँ ?

धीवर : तब तो बात वहीं की वहीं रह गई। शर्त्त पूरी नहीं हुई।

देवव्रत : आपही बताइये, मैं इसके लिए क्या कर सकता हूँ।

धीवर : मैं मूर्ख आदमी भला क्या कह सकता हूँ ?

देवव्रत : आप मूर्ख नहीं, बुद्धिमान हैं। आप ही मुझे राह दिखायें।

धीवर : मैं कुछ नहीं कह सकता।

देवव्रत : शायद यह मेरी परीक्षा का समय है। धीवर-सरदार, मैं दूसरी प्रतिज्ञा करता हूँ—मैं विवाह नहीं करूँगा, जीवन भर अविवाहित रहूँगा, कठोर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करूँगा।

धीवर : (*साश्चर्य*) राजकुमार !

सुबन्धु : (*साश्चर्य*) युवराज !

देवव्रत : धीवर-सरदार, देवव्रत की प्रतिज्ञा को फिर सुन लीजिये—देवव्रत न तो हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठेगा और न जीवन-भर विवाह करेगा। आप सन्तुष्ट हों, पिताजी

स्वस्थ रहें—मैं यही चाहता हूँ।

धीवर : राजकुमार। आप महान् हैं! जैसा सुना था, वैसा ही पाया। मैंने आपके हृदय को दुख पहुँचाया है, मुझे क्षमा करें।

देवव्रत : इस दुख में एक महान् सुख छिपा है धीवर-सरदार। आज से मेरे जीवन का पथ बदल गया। आप निश्चिन्त होकर जायें—अपनी कन्या के विवाह की तैयारी करें! मन्त्री जी, आप पिताजी को यह समाचार सुना दीजिये।

(*प्रस्थान*)

सुबन्धु : धीवर-सरदार, तुमने अपने स्वार्थ के लिए राजकुमार का सारा जीवन दाँव पर लगा दिया। यह अत्यन्त खेद की बात है।

धीवर : मन्त्री जी, यदि आप आदेश दें तो अभी भी.....

सुबन्धु : बहस मत करो। युवराज ने जैसा कहा है, वैसा ही करो। चले जाओ।

(*धीवर-सरदार का प्रस्थान*)

सुबन्धु : लगता है, संसार का सबसे पवित्र मानव देवव्रत के रूप में आया है। उनका निश्चय अटल है।

(*महाराज शान्तनु का पुनः प्रवेश*)

शान्तनु : मित्र सुबन्धु, तुम क्या अब तक यहीं खड़े हो ?

सुबन्धु : सम्राट्, मैं एक स्वप्न देख रहा था ?

शान्तनु : स्वप्न ?

सुबन्धु : हाँ स्वप्न—जागृत अवस्था का स्वप्न।

शान्तनु : आश्चर्य ! कैसा था वह स्वप्न ?

सुबन्धु : समुद्र का एक ज्वार आया और चला गया। एक भारी चट्टान मुझ पर गिरी और मैं जीवित बच गया।

शान्तनु : बच गये! खूब! तुम तो विदूषक की तरह बातें कर रहे हो सुबन्धु।

सुबन्धु : नहीं सम्राट्, सच कह रहा हूँ। अभी कुछ देर पूर्व यहाँ एक महान् आश्चर्यजनक घटना घटी है।

शान्तनु : कैसी घटना? मैं भी तो सुनूँ।

सुबन्धु : आपके पुत्र ने—युवराज देवव्रत ने—धोवर-सरदार से स्वयं बातें कीं। उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि वे सिंहासन पर कभी नहीं बैठेंगे, जीवन भर विवाह भी न करेंगे।

शान्तनु : (साश्चर्य) मन्त्री!

सुबन्धु : मैं सच कह रहा हूँ सम्राट्।

शान्तनु : मैं देवव्रत से भेंट करना चाहता हूँ।

(देवव्रत का प्रवेश)

देवव्रत : देवव्रत उपस्थित है पिताजी। आज्ञा कीजिए।

शान्तनु : आज्ञा? नहीं देवव्रत, तुम महान् हो। तुम्हारे सामने मैं अति हीन हूँ, अति तुच्छ हूँ। तुमने आज उस महान् त्याग का परिचय दिया है जो शायद सृष्टि के आरम्भ से अभी तक किसी ने नहीं किया। राम ने दशरथ की आज्ञा से चौदह वर्षों तक वनवास किया, लेकिन तुमने पिता के सुख के लिए सारा जीवन न्योछावर कर दिया।

देवव्रत : पिताजी, यह शरीर आपका है।

शान्तनु : मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ देवव्रत। वर मांगो।

देवव्रत : पिता जी, मैं अपने वचनों का निर्वाह कर सकूँ—ऐसी शक्ति मुझमें उत्पन्न हो, यही आशीर्वाद दीजिये।

शान्तनु : वही होगा। एक वर मैं अपनी ओर से देता हूँ। तुमने भीषण प्रतिज्ञा की है। आज से तुम्हारा नाम 'भीष्म' रहेगा। मृत्यु तुम्हारे अधीन रहेगी। जब तुम चाहोगे, तभी तुम्हारी मृत्यु होगी। स्वेच्छा-मृत्यु का वरदान आज तक किसी पिता ने अपने पुत्र को नहीं दिया है। जाओ भीष्म, तुम्हारा मंगल हो!

(*देवव्रत पिता के चरण छूते हैं। शान्तनु आशीष देते हैं*)

★::★

दूसरा दृश्य

स्थान—काशीराज का उद्यान।
समय—प्रभात।

(काशीराज की बड़ी कन्या अम्बा टहल-टहल कर गा रही है।)

गान

खिली कली, हँसे फूल, सौरभ लहराया।
गदराये जीवन में यौवन मुसकाया॥

ओर सभी छायी है धरती की लाली,
छलक—छलक पड़ती है काया मतवाली।

अधरों को अधरों का राग मधुर भाया।
खिली कली, हँसे फूल, सौरभ लहराया॥

मन का अनुराग लिये कोयलिया बोली,
वासन्ती वेला देहडाल डोली।

कजरारी आँखों में मदन उतर आया।
गदराये जीवन में यौवन मुसकाया॥

सरसो के रंगों में प्राणपुलक निखरे,
मन माधव पास कहीं नयन-नयन बिखरे।

झूम उठा तन-मन है कुन्तल बलखाया।
खिली कली, हँसे फूल, सौरभ लहराया।

अम्बा : ऋतुराज वसन्त का जादू सभी पर छाया हैं। पेड़-पौधे अपने पूर्ण यौवन के भार से लदे हैं। मनुष्य में एक नया उत्साह है, नई चेतना है। कहीं लता विशाल वृक्ष का आलिंगन कर रही है, कहीं पुष्प अपने रंगीन अधरों को खोले चुम्बन का संकेत दे रहा है। मतवाले भौंरे वासना में अन्धे होकर पराग की खोज में इधर-उधर उड़ रहे हैं—साथ ही प्रेम और विरह के गीत गा रहे हैं।

(सौभराज शाल्व का प्रवेश)

शाल्व : कौन ?

अम्बा : *(कुछ लज्जित होकर)* क्या सौभराज अपनी प्रियतमा को नहीं पहचानते ?

शाल्व : *(कुछ हँस कर)* काशीराज की कन्या अम्बा को पहचानना क्या इतना कठिन है ?

अम्बा : यही तो मेरा प्रश्न है।

शाल्व : आज भारत के कोने-कोने में राजकुमारी अम्बा के सौन्दर्य की चर्चा हो रही है।

अम्बा : सौभराज, क्या आप भी व्यंग करते हैं ?

शाल्व : नहीं राजकुमारी, सौभराज शाल्व सच कहता है।

अम्बा : प्रमाण ?

शाल्व : आज काशी की नगरी सजी हुई है। कल तुम्हारा स्वयंवर है। भारत के अनेक राजे-महाराजे काशी पहुँच चुके हैं। उनमें से प्रत्येक के मन में यही कामना है कि काशी की राजकुमारी अम्बा वरमाल उसी के गले में डाल दे।

अम्बा : सौभराज, कल स्वयंवर-दिवस है। लेकिन स्वयंवर सिर्फ मेरा ही नहीं, बल्कि हम तीन बहनों का है।

शाल्व : तीन बहनें ?—मतलब……

अम्बा : मतलब अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका। वरमाला के अधिकारी तीन व्यक्ति होंगे।

शाल्व : और वे तीन व्यक्ति इन राजे-महाराजाओं में सबसे अधिक भाग्यशाली होंगे।

अम्बा : यह तो वे राजागण ही बता सकते हैं।

शाल्व : तुम भी तो बता सकती हो।

अम्बा : हमें तो अपने कर्त्तव्य का पालन करना है।—कर्त्तव्य समझ कर ही स्वयंवर-सभा में उपस्थित होना है।

शाल्व : कर्त्तव्य समझ कर ?—मैं तुम्हारा तात्पर्य नहीं समझ पा रहा हूँ अम्बा।

अम्बा : समझने की जरूरत भी क्या है सौभराज ?

शाल्व : है जरूरत। मैं भी तो उन्हीं राजाओं में एक हूँ।

अम्बा : किन राजाओं में ?

शाल्व : उन्हीं में जो भाग्य आजमाने आये हैं।

अम्बा : यदि ऐसी बात है तो आप समझ लीजिये कि आप के भाग्य का निर्णय हो गया।

शाल्व : हो गया ?

अम्बा : हाँ, हो गया।

शाल्व : कैसा निर्णय ?—क्या मैं लौट जाऊँ ?

अम्बा : यह तो मैंने नहीं कहा।

शाल्व : क्या कहा ?

अम्बा : यही कि आपके भाग्य का निर्णय हो गया।

शाल्व : राजकुमारी, आप पहेली बुझा रही हैं।

अम्बा : (हँस कर) वाह ! अचानक 'तुम' से 'आप' ? सौभराज आप के नेत्रों से निराशा झाँक रही है। मुझे दया आ रही है।

शाल्व : अम्बा, तुम व्यंग कर रही हो।

अम्बा : आप स्वस्थ तो हैं ?—कल स्वयंवर में सभी राजे-महाराजे बन-ठन कर आयेंगे। आप क्या इसी मुद्रा में आयेंगे ?—यदि यही हाल रहा तो हम तीनों बहनें आपकी तरफ देखेंगी भी नहीं।

शाल्व : अम्बा, नहीं जानता था कि जिस नारी को मैं आज कई वर्षों से, मन-प्राण से, इतना प्यार करता था, वह आज मेरा तिरस्कार कर देगी ?

अम्बा : मैंने कब आप का तिरस्कार किया ?

शाल्व : तुम मेरी व्यग्रता को हँसी में उड़ा रही हो ?—क्या यह मेरा तिरस्कार नहीं है ?

अम्बा : सौभराज, मन को इतना छोटा न कीजिये। अम्बा ने बहुत पहले आपको अपना पति मान लिया है। क्या मुझ पर विश्वास नहीं है ?

शाल्व : क्षमा करो राजकुमारी। इस ज्ञानहीन प्रेमी को क्षमा करो।

अम्बा : सौभराज, कल की स्वयंवर-सभा में मेरी माला आपके गले में पड़ेगी —यह मेरा स्पष्ट निर्णय है।

शाल्व : राजकुमारी, सौभराज शाल्व के जीवन में वह दिन अत्यन्त महत्वपूर्ण होगा जब वह तुम्हें पटरानी बना कर अपनी राजधानी में ले जायेगा।

अम्बा : वह समय निकट है सौभराज। आप चिन्ता न कीजिए। अच्छा, मुझे आज्ञा दीजिये। जाती हूँ।

(प्रस्थान)

शाल्व : काशीराज की कन्या, अम्बा! जिस प्रतिमा की मैं गुप्तभाव से अपने हृदय में पूजा कर रहा हूँ, वह शीघ्र प्रकट होगी। कल का स्वयंवर मेरे जीवन का एक महत्वपूर्ण दिवस होगा।

(भीष्म का प्रवेश। तरुणाई समाप्त हो चली है)

शाल्व : तुम कौन हो?

भीष्म : यही प्रश्न मेरा भी है।

शाल्व : मैं सौभराज शाल्व हूँ।

भीष्म : मैं भीष्म हूँ।

शाल्व : भीष्म? लगता है, यह नाम मैंने कहीं सुना है।

भीष्म : सुना होगा।

शाल्व : क्या चाहते हो?

भीष्म : विश्राम।

शाल्व : यह विश्राम करने की जगह नहीं है।

भीष्म : कौन सी जगह है?

शाल्व : यह काशीराज का उद्यान है।

भीष्म : यही जानकर तो मैं आया हूँ। विश्राम करने के लिए इससे अच्छी जगह और कहाँ मिलेगी?

शाल्व : भीष्म, तुम कहाँ से आ रहे हो?

भीष्म : हस्तिनापुर से।

शाल्व : अब समझा। तुम हस्तिनापुर के भीष्म हो। लोग कहते हैं कि तुम बड़े वीर हो। क्या यह सच है?

भीष्म : मैं नहीं जानता।

शाल्व : लगता है, मैं ठीक कह रहा हूँ।

भीष्म : शायद ठीक कह रहे हो।

शाल्व : तुम्हारे आने का कारण?

भीष्म : कल के स्वयंवर में भाग लेने ... ...

शाल्व : (अट्टहास) स्वयंवर में भाग लेने आये हो? सुना है कि तुम बालब्रह्मचारी हो। क्या स्वयंवर का आकर्षण तुम्हें खींच लाया है?

भीष्म : ठीक समझा तुमने सौभराज।

शाल्व : (अट्टहास) तुमने तो शायद जीवन भर विवाह न करने की प्रतिज्ञा की थी। फिर इस उम्र में ....

भीष्म : शाल्व, तुम मेरा अपमान कर रहे हो।

शाल्व : अपमान ? (अट्टहास) जो व्यक्ति शान में आकर प्रतिज्ञा करता है और उसकी पूर्त्ति की क्षमता नहीं रखता, वह क्या सम्मान पाने का अधिकारी है ?

भीष्म : यह तुमने कैसे समझ लिया कि मैं अपने लिए इस स्वयंवर में आया हूँ।

शाल्व : अब छिपाने से क्या लाभ है भीष्म ? इस स्वयंवर-सभा में जो भी राजा आयेंगे, अपने लिए ही। मैं भी तो अपने लिए आया हूँ।

भीष्म : तुम्हारा अपने लिए आना सम्भव है, भीष्म के लिए असम्भव है।

शाल्व : मैंने यह भी सुना है कि काशीराज ने स्वयंवर में भाग लेने के लिए कोई निमन्त्रण-पत्र हस्तिनापुर भेजा तक नहीं।

भीष्म : यह ठीक बात है। काशीराज से भेंट होने पर मैं इसका कारण पूछूँगा।

शाल्व : कारण ? कारण समझना क्या इतना कठिन है ? कारण तो मैं भी बता सकता हूँ।

भीष्म : यदि बता सकते हो तो बताओ शाल्व।

शाल्व : हस्तिनापुर का राजा—अर्थात् तुम्हारा भाई—विचित्रवीर्य धीवरकन्या का पुत्र है। काशीराज की कन्या ऐसे हीन कुल के राजा का वरण नहीं कर सकती।

भीष्म : समझ गया। काशीराज मेरे भाई को—हस्तिनापुर-नरेश विचित्रवीर्य को—हीन कुल का समझते हैं, धीवरकन्या का पुत्र समझते हैं। वे भूल गये हैं कि भारत के सर्वश्रेष्ठ कुल के महाराज शान्तनु विचित्रवीर्य के पिता थे। मैं इस अपमान का बदला लूँगा।

शाल्व : बदला लोगे ?

भीष्म : सुन लो सौभराज शाल्व। मैं आया था अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए काशीराज की किसी एक कन्या को माँगने। लेकिन अब मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं अपने भाई के लिए काशीराज की तीनों कन्याओं को अपने साथ लेता जाऊँगा।

शाल्व : भीष्म, क्या तुम समझते हो कि स्वयंवर में उपस्थित राजाओं की तलवारों पर काई जमी रहेगी ? क्या काशीराज भयकम्पित होकर अपनी तीनों कन्याओं को तुम्हारे जिम्मे लगा देंगे और हम सबलोग देखते रहेंगे ? यह कभी नहीं हो सकता।

भीष्म : पहले शायद ऐसा न होता। विचित्रवीर्य के लिए मैं एक कन्या लेकर सन्तुष्ट हो जाता, लेकिन अब तो तीनों राजकुमारियों को साथ लेकर ही जाऊँगा।

शाल्व : भीष्म, तुम्हारा अहंकार चूर-चूर हो जायेगा।

भीष्म : मेरे क्रोध को उत्तेजना न दो शाल्व।

शाल्व : सौभराज का रक्त पानी नहीं हुआ है भीष्म। यदि तुम चाहते हो कि कल के लिए तुम जीवित न रहो तो शाल्व की तलवार तुम्हारा रक्त पीने के लिए तैयार है।

भीष्म : शाल्व, तुमने अभी भीष्म को देखा नहीं है।

शाल्व : आक्रमण करता हूँ। बचो भीष्म।

(शाल्व प्रहार करते हैं। भीष्म के आघात से उनकी तलवार गिर जाती है।)

भीष्म : जाओ सौभराज, तुम्हें प्राणदान देता हूँ। जाकर सूचित कर दो कि कल मैं, भीष्म, हस्तिनापुर-नरेश विचित्रवीर्य के लिए, काशीराज की तीनों कन्याओं का हरण करूँगा। यदि साहस हो तो काशीराज और अन्य राजागण मेरा विरोध कर सकते हैं।

(सवेग प्रस्थान)

तीसरा दृश्य

स्थान—हस्तिनापुर का राजमहल।

समय—प्रभात।

(हस्तिनापुर-नरेश विचित्रवीर्य और मन्त्री सुबन्धु बातें कर रहे हैं।)

विचित्र : क्या यह सच है कि दादा जी ने काशी की स्वयंवर-सभा के सभी राजाओं को परास्त कर दिया ?

सुबन्धु : यह सच है सम्राट्। मैं भी उनके साथ काशी की उस स्वयंवर-सभा में उपस्थित था।

विचित्र : क्या आप पूरी कथा मुझे सुनायेंगे ?

सुबन्धु : सम्राट्, काशीराज ने अपनी तीन कन्याओं के लिए स्वयंवर का आयोजन किया। स्वयंवर में भारत के अनेक वीर राजागण उपस्थित थे। काशीराज की कन्यायें वरमाल लिये एक ओर खड़ी थीं। अचानक स्वयंवर-सभा में आपके बड़े भाई वीर भीष्म ने प्रवेश किया। सब लोगों की आँखें उन पर टिक गईं।

विचित्र : फिर क्या हुआ ?

सुबन्धु : वीर भीष्म ने काशीराज को सम्बोधित करते हुए कहा कि वे अपनी कन्याओं को सम्राट् विचित्रवीर्य के लिए उन्हें दे दें। काशीराज न माने। राजाओं ने अपनी-अपनी तलवारें खींच लीं। बिजली की गति से भीष्म ने आगे बढ़ कर काशीराज की कन्याओं को अपने रथ में बैठा लिया। फिर तो भयंकर मारकाट मच गई।

विचित्र : फिर ··· फिर ··· आगे क्या हुआ ?

सुबन्धु : एक ओर सभी राजागण और उनकी सेनायें, दूसरी ओर अकेले भीष्म। वे दोनों हाथों से तलवार चला रहे थे। लगता था कि आकाश का सूर्य अपनी गरमी से सारे संसार को दग्ध कर देगा। स्वयंवर-सभा लाशों से पट गई। राजागण भाग खड़े हुए। काशीराज ने भीष्म से क्षमायाचना की। उसके बाद तीनों राजकुमारियों के साथ भीष्म हस्तिनापुर लौट आये।

विचित्र : चाचा जी, दादा जी महान् हैं, पूज्य हैं। वे स्वर्गलोक के देवता हैं। लगता है, भूल से परमात्मा ने उन्हें इस संसार में भेज दिया है।

सुबन्धु : आपका कहना सत्य है सम्राट्। यदि उनमें देवताओं के गुण न होते तो ऐसा महान् त्याग वे कैसे करते ? बाल-ब्रह्मचारी कैसे कहलाते ? इतने बड़े साम्राज्य को तिनके की तरह कैसे छोड़ देते ? महलों में रह कर भी राजसुख से दूर कैसे रहते ?

विचित्र : दादा जी ने सारा त्याग पिताजी के लिए तथा मेरे लिए किया है मन्त्री जी। पिताजी की मृत्यु के बाद मेरी माता ने तथा मैंने दादा से निवेदन किया था कि वे सारी बातों को भूल कर सिंहासन पर बैठें, हस्तिनापुर के सम्राट् बनें। जानते हैं, उन्होंने क्या कहा ?

सुबुन्धु : क्या कहा ?

विचित्र : उन्होंने माँ को सम्बोधित करते कहा—'माँ, मुझे क्षमा करो। हस्तिनापुर का सम्राट् तो मेरा भाई विचित्रवीर्य है। मैं इसका अंगरक्षक बन कर रहूँगा। अपने छोटे भाई की छाया बन कर रहूँगा।'—ओह ! मैं रो पड़ा। माँ भी रोने लगी।—और दादा करुण भाव से हम दोनों की ओर देखते रहे। (रो पड़ते हैं)

सुबन्धु : सम्राट्, आपके नेत्रों में आँसू ?

विचित्र : मन्त्री जी, बार-बार सोचता हूँ कि दादा के इस स्नेह का, इस त्याग का, मूल्य मैं कैसे चुका सकूँगा ?—कब चुका सकूँगा ?

सुबन्धु : आप अस्वस्थ हैं सम्राट्। अधिक चिन्ता न कीजिये। राजवैद्य ने कहा है कि आप जितना प्रसन्न रहेंगे, उतना ही आप के स्वास्थ्य को लाभ पहुँचेगा। अच्छा, मैं जाता हूँ।

(प्रस्थान)

विचित्र : लगता है, यह महल काट खायेगा। कुछ अच्छा नहीं लगता। जीवन में निराशा ही निराशा है। दादा जी मेरे लिए काशीराज की तीन कन्याओं को हर कर ले आये हैं।

(अम्बा का प्रवेश। विचित्रवीर्य को देखते ही घूँघट काढ़ लेती है।)

विचित्र : आप····आप कौन हैं ?

अम्बा : मेरा नाम अम्बा है। आप कौन हैं ?

विचित्र : मैं विचित्रवीर्य हूँ। आप शायद काशीराज की कन्या हैं।

अम्बा : हाँ, मैं उनकी सबसे बड़ी कन्या हूँ। मेरे साथ मेरी दो बहनें भी हैं।

विचित्र : उनके नाम जान सकता हूँ ?

अम्बा : अम्बिका और अम्बालिका।

विचित्र : *(याद करने के भाव में)* अम्बा ! अम्बिका !! अम्बालिका !!!--अम्बा····

अम्बा : आप बार-बार मेरा नाम क्यों ले रहे हैं ?

विचित्र : आपका घूँघट नहीं हट सकता क्या ?

(तत्काल अम्बा घूँघट हटा देती है। विचित्रवीर्य मुग्धावस्था में ठगे-से खड़े रहते हैं।)

अम्बा : *(हँस कर)* आप इधर क्या देख रहे हैं सम्राट् ?

विचित्र : *(मुग्धभाव से)* आपको—नारी को—सौन्दर्य की प्रतिमा को देख रहा हूँ।

अम्बा : अनजान नारी को इस प्रकार देखना क्या आपको शोभा देता है ?

विचित्र : क्षमा कीजिये !—लगा, मैं खो गया हूँ। मैंने ऐसा रूप कभी देखा नहीं ! नारी का ऐसा मोहक भाव मैंने कभी देखा नहीं।

अम्बा : रूप ?—मोहक भाव ? *(अट्टहास)*

विचित्र : आप हँसती क्यों हैं ?

अम्बा : सम्राट्, आपने अग्नि का कभी स्पर्श किया है ?

विचित्र : किया है।

अम्बा : हाथ नहीं जला ?

विचित्र : हाथ हटा लिया, इसलिए नहीं जला।

अम्बा : आप समझदार हैं। मैं भी आग हूँ। आप इस आग का स्पर्श नहीं कर पायेंगे।

विचित्र : तो फिर आप आयीं क्यों ?

अम्बा : इसका उत्तर अपने बड़े भाई बालब्रह्मचारी भीष्म से पूछिये।

विचित्र : दादा से ?

अम्बा : हाँ, उन्हीं से पूछिये। मेरी दो बहनें बड़ी सरल, बड़ी नम्र हैं, आपके योग्य हैं। आप जाकर उनसे भेंट कीजिये। वे दोनों आप की प्रतीक्षा कर रही हैं।

विचित्र : मुझे क्षमा कीजिये। मैं जाता हूँ।

(प्रस्थान)

अम्बा : भीष्म ने मेरा हरण किया है। मेरी आशालता पर तुषारपात किया है। मुझे भीष्म से मिलना है। सामने से कौन आ रहा है ?

(भीष्म का प्रवेश)

अम्बा : आप कौन हैं ?

भीष्म : मैं भीष्म हूँ।

अम्बा : मैं अम्बा हूँ—जिसका आपने हरण किया है।

भीष्म : अम्बा ? देवी, क्षमा करो, मैंने तुम्हारी इच्छा के प्रतिकूल हरण किया है।

अम्बा : इसके लिए क्षमा मांगने की आवश्यकता नहीं है राजकुमार। आप पुरुष हैं। सब कुछ कर सकते हैं।

भीष्म : नहीं, ऐसी बात नहीं है अम्बा। मुझे लाचार होकर ऐसा करना पड़ा।

अम्बा : लाचार होकर ? कैसी लाचारी ?

भीष्म : काशीराज ने जानबूझ कर स्वयंवर में हस्तिनापुर-नरेश को आमन्त्रित नहीं किया। वे विचित्रवीर्य को धीवरकन्या का पुत्र समझ कर हीन मानते थे। मुझे यह सिद्ध करना था कि पराक्रम से मनुष्य कुछ भी कर सकता है। मैं विचित्रवीर्य के लिए किसी एक राजकुमारी को पाकर सन्तुष्ट हो जाता, लेकिन काशीराज के अहंकार को दूर करने के लिए मुझे उनकी तीनों कन्याओं का हरण करना पड़ा।

अम्बा : भीष्म की वीरता को सारा संसार जानता है। अब आप यह आदेश दें कि हमें क्या करना है।

भीष्म : अपने लाये जाने का उद्देश्य तुम जानती हो। तुम तीनों बहनों का विवाह हस्तिनापुर के सम्राट् विचित्रवीर्य के साथ होगा।

अम्बा : यह असम्भव है।

भीष्म : असम्भव क्यों ?

अम्बा : मैं विचित्रवीर्य के साथ विवाह नहीं कर सकती।

भीष्म : कारण।

अम्बा : मैं उसी के साथ विवाह करूँगी जिसने मेरा हरण किया है।

भीष्म : तुम्हारा अभिप्राय क्या है ?

अम्बा : स्पष्ट है। आपने मेरा हरण किया है, स्वयंवर-भूमि में सभी राजाओं के सामने आपने मेरा हाथ पकड़ा है। इस लिए मेरा विवाह आपके साथ हो सकता है, अन्य के साथ नहीं।

भीष्म : असम्भव।

अम्बा : इस संसार में कुछ भी असम्भव नहीं है राजकुमार। क्या आपने मेरा हरण नहीं किया है ? क्या आपने मेरा हाथ नहीं पकड़ा है ?—आप तो नीति के जानने वाले हैं, शास्त्रों के ज्ञाता हैं।—आप ही बतायें, क्या मैं झूठ कहती हूँ ?

भीष्म : अम्बा, तुम जानती हो कि मैंने जीवन भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की है। मैं तुमसे क्या, किसी भी रमणी से विवाह करने का अधिकार नहीं रखता।

अम्बा : आपका तर्क व्यर्थ है। हरण करने के पूर्व आपने मुझसे पूछा था क्या ?—आपने क्या कभी सोचा था कि अम्बा के हृदय में किसी पुरुष के प्रति प्रेम पहले से भी हो सकता है ? आपने मेरे मन को समझने का कुछ भी प्रयास किया था ?

भीष्म : क्या तुम्हारे मन में किसी के प्रति प्रेम पहले से था ?

अम्बा : था ।

भीष्म : कौन था वह भाग्यशाली पुरुष ?

अम्बा : सौभराज शाल्व ।

भीष्म : सौभराज शाल्व ? —तुम···तुम···उसको प्यार करती थीं ? तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बताया अम्बा ?

अम्बा : आपने मुझसे पूछा कब ?—सौभराज शाल्व को मैं बहुत दिनों से प्यार करती थी। वरमाल मैं उन्हीं के गले में डालने वाली थी, लेकिन आपने···आपने (*रो पड़ती है*) ऐसा करने नहीं दिया। मेरी समस्त आशालता पर वज्रपात कर दिया।

भीष्म : मुझे अत्यन्त खेद है। मैंने तुम्हारा और सौभराज का बड़ा अहित किया है। घोर पाप किया है। उस पाप की मार्जना करना चाहता हूँ।

अम्बा : उसकी मार्जना आप मुझसे विवाह करके ही कर सकते हैं।

भीष्म : तुम मेरी विवशता को जानती हो। तुमसे विवाह करके कोई भी पुरुष अपने को धन्य मानेगा। लेकिन मैं उस सुख से वंचित हूँ।

अम्बा : राजकुमार, अपनी प्रतिज्ञा को भूल जाइये। आपने मेरा हरण किया है—मेरे पति बनने का अधिकार अब केवल आपको है।

भीष्म : नहीं अम्बा, सच कहता हूँ—तुम मेरी माँ के समान हो। मैं अपनी प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ सकता। मुझे इसके लिए बाध्य न करो। आकाश पृथ्वी पर आ सकता है, सूर्योदय पश्चिम में हो सकता है, पर भीष्म अपनी प्रतिज्ञा पर अटल है। मैं इस जन्म में विवाह नहीं करूँगा—नहीं करूँगा।

अम्बा : राजकुमार, आप ही बतायें, फिर मैं क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? किसको मुँह दिखाऊँ ? (*रो पड़ती है*)

भीष्म : मुझसे घोर अपराध हुआ है अम्बा। लेकिन मैं क्या करूँ ? हाँ, एक मार्ग है। तुम सौभराज शाल्व के पास जाओ। मैं, भीष्म, क्षमायाचना करता हूँ। अनजाने में मैंने तुम्हारा हरण किया है। लेकिन मन-वचन से तुम पवित्र हो। सौभराज तुम्हें स्वीकार कर लेगा।

अम्बा : (*कुछ देर तक सोचने के बाद*) अच्छी बात है। जाती हूँ राजकुमार। सौभराज की शरण में जाती हूँ। लेकिन एक बात। यदि सौभराज ने अस्वीकार कर दिया तो मैं फिर आप के पास आऊँगी। आपको अपना निर्णय बदलना होगा—इसे जान लें।

(*प्रस्थान*)

भीष्म : अम्बा का हरण करके मैंने अपराध किया है—अक्षम्य अपराध। सौभराज शायद अम्बा को स्वीकार नहीं करेगा। फिर क्या होगा ?—देखा जायगा।

(*प्रस्थान*)

—★—

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—सौभराज शाल्व का महल।

समय—प्रभात।

शाल्व : अपमान! भीष्म ने मेरा अपमान किया है। उसने मुझे पराजित किया है। मेरे सामने काशी की स्वयंवर-सभा में अम्बा का हरण किया है। अम्बा ने मुझे वरण करने का वचन दिया था। लेकिन भीष्म के पौरुष के आगे वह झुक गई।—इस अपमान का प्रतिशोध लेना पड़ेगा।

(अम्बा का प्रवेश)

शाल्व : तुम—तुम कौन हो?

अम्बा : क्या सौभराज इतना शीघ्र मुझे भूल गये?

शाल्व : तुम ....

अम्बा : मैं अम्बा हूँ—क्या यह कहने की आवश्यकता है?

शाल्व : हाँ, तुम अम्बा हो—याद है।

अम्बा : याद है?—ऐसी उपेक्षा?—अम्बा को याद रखना पड़ा? क्या——?

शाल्व : हाँ अम्बा, मैं तुम्हें भूलने की चेष्टा कर रहा था। तुम नहीं आतीं तो शायद भूल भी जाता। लेकिन, तुम्हारे आने से रुका हुआ तूफान गतिमान हो चला। तुम क्यों आयी हो?

अम्बा : आपके पास तो मुझे आना ही था। आपको वरण करूँगी—ऐसा मैंने वचन दिया था।

शाल्व : लेकिन उस वचन को निभाने की क्षमता तुममें नहीं थी।

अम्बा : वह मेरा दोष नहीं था सौभराज। मैं आपके गले में वरमाल डालने का संकल्प कर चुकी थी। लेकिन भीष्म ने कुछ करने न दिया। आपने क्या स्वयंवर-भूमि का वह दृश्य नहीं देखा?—आपने क्या भीष्म से युद्ध नहीं किया?—लेकिन परिणाम क्या हुआ?—जब बड़े-बड़े वीर भीष्म के सामने नहीं टिक सके तो एक नारी भला उनका सामना कैसी करती?

शाल्व : क्या तुम चिल्ला कर भीष्म को नहीं कह सकती थीं कि तुम उसके साथ जाने के लिए तैयार नहीं हो?

अम्बा : वह सकती थी, चिल्ला सकती थी, रो सकती थी। लेकिन जहाँ तलवारें चल रही हों, मारकाट मची हो, और सबकी जड़ में नारी-हरण की भावना हो, वहाँ कौन मेरे स्वर को सुनता?

शाल्व : इसीसे तुम सरलभाव से, बिना किसी प्रतिवाद के, एक मूक पशु की तरह, भीष्म के रथ में बैठ गईं। क्यों?

अम्बा : हम तीनों बहनें स्वयंवर के भयानक दृश्य को देख कर रो रही थीं। लेकिन हममें से कोई कुछ भी नहीं कर सकती थी।

शाल्व : फिर क्यों आई हो आज मेरे पास ?—क्या अपनी विवशता की कहानी सुना कर मुझसे क्षमा मांगने आई हो ?

अम्बा : नहीं सौभराज, मैं क्षमा मांगने नहीं आई हूँ। उस घटना के आप स्वयं साक्षी हैं। इसलिए कुछ भी कहना व्यर्थ है।

शाल्व : तुम्हारे आने का कारण क्या है ?

अम्बा : मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने आई हूँ। आपको वरण करने आई हूँ।

शाल्व : अपने तीखे शब्दों से मेरा क्रोध न बढ़ाओ अम्बा।

अम्बा : अम्बा झूठ नहीं बोलती सौभराज। जिस प्रतिज्ञा को मैं काशी की स्वयंवर-सभा में पूरी न कर सकी, उसे मैं यहाँ पूरी करने आयी हूँ।

शाल्व : भीष्म ने तुम्हारा हरण किया है। तुम हस्तिनापुर के महलों में रही हो। फिर मेरे पास आने का साहस तुमने कैसे किया ? क्या तुम समझती हो कि मैं भीष्म द्वारा हरण की हुई नारी को अपनी रानी बनाऊँगा ? क्या तुम समझती हो कि मैं भीष्म की कृपा का भिखारी हूँ ?-शायद तुम नहीं जानतीं कि भीष्म मेरा शत्रु है—चिरशत्रु।

अम्बा : सौभराज !

शाल्व : लौट जाओ अम्बा। यदि सम्भव हुआ तो मैं भीष्म से इस अपमान का प्रतिशोध लूँगा।

अम्बा : (*रोकर*) सौभराज !—भीष्म बालब्रह्मचारी हैं। उन्होंने जीवन भर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की है। हम तीन बहनों का हरण उन्होंने अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य के लिए किया था। हस्तिनापुर पहुँचने पर मेरी दो बहनों ने विचित्रवीर्य से विवाह करना स्वीकार कर लिया, पर मैंने स्वीकार नहीं किया। जब भीष्म को यह मालूम हुआ कि मैं आपको वरण करने का वचन दे चुकी हूँ तो उन्होंने आदर के साथ मुझे आपके पास भिजवा दिया।

शाल्व : भीष्म की इस उदारता में अहंकार छिपा है। संसार के सामने सिद्ध करना चाहता है कि वह सर्वश्रेष्ठ वीर है, वह सभी राजाओं के सामने नारी-हरण कर सकता है और फिर दया करके उस नारी को उसके प्रेमी के पास भेज भी सकता है।

अम्बा : प्रेमी ?—यह क्या कहते हैं सौभराज ?—मैंने मन-प्राण में सदा आपको पतिभाव में पूजा है। मेरा हरण हुआ, फिर भी मैं आपकी मूर्त्तिको अपने हृदय में बिठाये रही, हस्तिनापुर की सम्राज्ञी के पद को मैंने ठुकरा दिया।—भीष्म के मन में आपके प्रति कोई आक्रोश नहीं है। उन्हें पश्चात्ताप है कि उन्होंने अनजाने में मेरा हरण किया।

शाल्व : नहीं अम्बा, मैं तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता। क्षमा करो।

अम्बा : नहीं सौभराज, ऐसा न कीजिये। मैं आपकी शरण में आई हूँ। मेरा परित्याग न कीजिये।

शाल्व : तुम्हारी प्रार्थना व्यर्थ है अम्बा। भीष्म ने तुम्हारा हरण किया है। तुम्हारा स्थान हस्तिनापुर के महल में है। भीष्म तुम्हारा पति है, सौभराज नहीं।

अम्बा : ऐसा कहते आपको लज्जा नहीं आती ? ब्रह्मचारी भीष्म के विरुद्ध ऐसी बात कहते आपको संकोच नहीं होता ?

शाल्व : ब्रह्मचारी भीष्म ? (*अट्टहास*)

अम्बा : भीष्म आपसे अधिक उदार हैं। मेरे निवेदन को स्वीकार कर उन्होंने मुझे आपके पास आने की अनुमति दी। लेकिन आपने मुझे स्वीकार न किया। अब मैं कहाँ जाऊँ ? क्या करूँ ? (*रो पड़ती है।*)

शाल्व : (*अट्टहास करते हुए*) भीष्म के पास जाओ। भीष्म तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।

अम्बा : नीच ! कापुरुष ! मैं नहीं जानती थी कि आप इतने पतित हैं। आपने भीष्म से मेरा सम्बन्ध जोड़ा है। आपने मुझ निर्दोष पर कलंक लगाया है। मैं आपका रक्त पीयूँगी। आपकी हत्या करूँगी। (*कटार निकालकर शाल्व को मारना चाहती है, फिर रुक जाती है*) नहीं आपके रक्त से अपने हाथ को दूषित नहीं करूँगी। इस महल के विषाक्त वायुमंडल में सांस लेना भी कठिन प्रतीत होता है। कापुरुष ! अपने मिथ्या अभिमान में जलो ! नष्ट हो जाओ ! मैं जाती हूँ। (*अट्टहास के साथ प्रस्थान*)

दूसरा दृश्य

स्थान—परशुराम का आश्रम।

समय—प्रभात।

(*परशुराम बैठे हैं। अम्बा खड़ी है। सामने परशुराम का फरसा टंगा है।*)

परशु : कौन हो तुम ?

अम्बा : मैं काशीराज की कन्या अम्बा हूँ।

परशु : यहाँ क्यों आई हो ?

अम्बा : न्याय माँगने।

परशु : किससे ?

अम्बा : जमदग्नि-पुत्र महाबलशाली महर्षि परशुराम से।

परशु : परशुराम राजा नहीं है ; न्याय-विचार करना राजाओं का काम है।

अम्बा : लेकिन जब राजा अत्याचार करे, जब बलशाली पुरुष एक अबला को सताये, स्त्री का जीना कठिन कर दे तो न्याय विचार कौन करेगा ?

परशु : परशुराम ब्राह्मण है। उसे उत्तेजना न दो अम्बा।

अम्बा : संसार जानता है कि महर्षि परशुराम क्षत्रियों के लिए काल हैं, उनके रौद्ररूप को देखकर देवगण भी भयकम्पित होते हैं। उनके पास शस्त्र और शास्त्र दोनों हैं। वे वेदों के मर्मज्ञ तथा युद्धविद्या के आचार्य हैं।

परशु : अम्बा, पहेली न बुझाओ। बताओ, किस राजा ने तुम्हें सताया है, किसने तुम्हारे साथ अन्याय किया है ?

अम्बा : उनका नाम मेरी जीभ पर नहीं आता भगवन्।

परशु : तुम डरती हो ?

अम्बा : हाँ।

परशु : परशुराम की शरण में आने पर भी तुम्हें उस अत्याचारी से भय लगता है ?

अम्बा : नहीं भगवन्, ऐसी बात नहीं है।—मैं एक सामान्य नारी हूँ, अबला हूँ, संतप्त हूँ। वह एक शक्तिशाली पुरुष हैं, राजवंश के हैं, संसार उनसे भय खाता है, उनके सामने नतमस्तक होता है।

परशु : (कर्कश स्वर में) उसका नाम बताओ अम्बा।

अम्बा : नाम ?

परशु : तुम परशुराम के क्रोध को नहीं जानतीं। अधिक समय न लो। उसका नाम बताओ।

अम्बा : भीष्म।

परशु : (आश्चर्य) अम्बा !

अम्बा : इसीसे मैं नाम बताने में संकोच कर रही थी। मैं जानती थी कि आप भीष्म के गुरु हैं।

परशु : भीष्म का क्या अपराध है ?

अम्बा : काशी की स्वयंवर-सभा में भीष्म ने मेरा हरण किया। हस्तिनापुर पहुँचने पर मैंने बताया कि मैं वरमाल सौभराज शाल्व के गले में डालना चाहती थी। यह सुनकर भीष्म ने मुझे सौभराज के पास जाने की अनुमति दे दी। जब मैं सौभराज के पास गई तो उसने यह कह कर मुझे स्वीकार न किया कि भीष्म ने मेरा हरण किया है। भीष्म ने भी मुझे स्वीकार न किया। इस तरह मैं कहीं की न रही।

परशु : क्या तुम चाहती हो कि शाल्व तुमसे विवाह करना स्वीकार कर ले ?

अम्बा : नहीं, अब मैं उसे देखना भी नहीं चाहती।

परशु : कारण ?

अम्बा : वह नीच है, कापुरुष है।

परशु : तुम भीष्म से क्या चाहती हो ?

अम्बा : भीष्म ने स्वयंवर-सभा में मेरा हरण किया है, वे मुझसे विवाह कर लें—केवल यही।

परशु : यदि भीष्म स्वीकार न करे तो ?

अम्बा : उन्हें दण्डित करें—यह मेरा आग्रह है। भीष्म आपके शिष्य हैं। उन्हें आप की आज्ञा माननी होगी।

परशु : अम्बा, तुम चिन्ता न करो। मैं प्रयत्न करूँगा। देखो, भीष्म आ रहा है तुम जाओ। विश्राम करो।

(अम्बा का प्रणाम करके प्रस्थान। परशुराम टहलने लगते हैं। भीष्म का प्रवेश। चरण छूकर अभिवादन।)

भीष्म : क्या गुरुदेव ने मेरी याद की है ?

परशु : हाँ भीष्म, मैंने तुम्हारी याद की है।

भीष्म : आज्ञा ?

परशु : तुम कैसे हो ?

भीष्म : अच्छा हूँ।

परशु : नहीं भीष्म, तुम अशान्त हो, चिन्तित हो—ऐसा तुम्हारा मुखमंडल कह रहा है।

भीष्म : ऐसी कोई बात नहीं है गुरुदेव।

परशु : तुम अम्बा को जानते हो ?

भीष्म : जानता हूँ—अच्छी तरह जानता हूँ गुरुदेव।

परशु : तुमने काशी की स्वयंवर-सभा में उसका हरण किया था।

भीष्म : किया था गुरुदेव। अपने भाई विचित्रवीर्य के लिए मैंने काशीराज की तीनों कन्याओं का हरण किया था।

परशु : अम्बा तुम्हारी अनुमति से शाल्व के पास गई। पर शाल्व ने उसे शरण न दी।

भीष्म : फिर—मैं—क्या करूँ ?

परशु : तुमने उसका हरण किया है। तुम अम्बा से विवाह कर लो।

भीष्म : *(आश्चर्य से)* गुरुदेव !

परशु : यह तुम्हारे गुरु की आज्ञा है।

भीष्म : गुरुदेव, मुझे क्षमा करें।

परशु : *(ऊँचे स्वर में)* यह परशुराम का आदेश है भीष्म।

भीष्म : गुरुदेव, मेरे प्राण ले लें, पर ऐसा भयंकर आदेश न दें।

परशु : *(बंकिम भृकुटि)* तुम मेरे आदेश का पालन करना नहीं चाहते ?

भीष्म : महर्षि परशुराम के आदेश को कौन ठुकरा सकता है ? इस सृष्टि में कौन ऐसा व्यक्ति है जो आप के आक्रोश से परिचित न हो ? आपकी क्रोधमुद्रा से तो देवगण भी डरते हैं, मैं तो एक सामान्य मनुष्य हूँ।

परशु : फिर तुम मेरे आदेश का पालन क्यों नहीं करते ?

भीष्म : गुरुदेव, क्या आप नहीं जानते कि भीष्म मेरा नाम क्यों पड़ा ?—मैंने पिता के सुख के लिए जीवनभर अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा की है।—मैं स्त्री-सुख से सदा के लिए वंचित हूँ।

परशु : तुम्हें अपनी प्रतिज्ञा तोड़नी होगी भीष्म। तुम्हें अम्बा से विवाह करना होगा।

भीष्म : यह असम्भव है।

परशु : 'असम्भव' शब्द का उच्चारण परशुराम के सामने न करो भीष्म।

भीष्म : भार्गव, फिर कहता हूँ कि मेरे प्राण ले लें, पर ऐसा भयंकर आदेश न दें।

परशु : तुम जमदग्नि-पुत्र परशुराम के क्रोध को आमन्त्रित कर रहे हो भीष्म। तुम भूल रहे हो कि परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रियों के रक्तकुंड में स्नान किया है। इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से शून्य कर दिया है।

भीष्म : क्षमा करें गुरुदेव। उस समय इस पृथ्वी पर भीष्म का जन्म नहीं हुआ था, अन्यथा वह आपका प्रतिकार करता।

परशु : (सक्रोध) भीष्म !

भीष्म : गुरुदेव, आप ब्राह्मण हैं। आपके मुँह से शास्त्र की बातें अच्छी लगती हैं, शस्त्र धारण करना आपको शोभा नहीं देता।

परशु : उद्धत राजकुमार ! तुम परशुराम के सोये क्रोध को भड़का रहे हो। तुम्हारा अभिमान चूर-चूर हो जायेगा।

भीष्म : गुरुदेव, भीष्म अपनी प्रतिज्ञा पर अटल है। संसार की कोई भी शक्ति मुझे कर्त्तव्य-पथ से च्युत नहीं कर सकती। मैं जीवनभर अविवाहित रहूँगा ! आपका क्रोध या नारी का सौन्दर्य मुझे कदापि विचलित नहीं कर सकता।

परशु : भीष्म, तुम परशुराम के पराक्रम से टकराना चाहते हो ? शायद तुम्हारा मरण मेरे हाथों लिखा है।

भीष्म : नहीं गुरुदेव, मेरी मृत्यु मेरे अधीन है। ऐसा मेरे पिता ने वरदान दिया है।

परशु : एक बार फिर पूछता हूँ भीष्म। तुम क्या चाहते हो—अम्बा के साथ विवाह या परशुराम के साथ युद्ध ?

भीष्म : गुरुदेव, अपने कटु शब्दों के लिए क्षमा चाहता हूँ। भाग्य ने मुझे स्त्री-सुख से वंचित कर रखा है। इसलिए मुझे विवाह करने का आदेश न दें।

परशु : उत्तर दो भीष्म—अम्बा के साथ विवाह या परशुराम के साथ युद्ध ?

भीष्म : गुरुदेव !

परशु : उत्तर दो भीष्म।

भीष्म : मैं.....मैं.....युद्ध करूँगा। अपनी प्रतिज्ञा को निभाने के लिए मैं सब कुछ करूँगा।

परशु : उत्तम ! भीष्म, आज के चौथे दिन, कुरुक्षेत्र के विशाल मैदान में, मेरा और तुम्हारा युद्ध होगा, गुरु और शिष्य का विचित्र युद्ध होगा। स्वीकार है ?

भीष्म : स्वीकार है।

(भीष्म चरण छूकर प्रणाम करते हैं। परशुराम देखते रहते हैं।)

—:o:—

तीसरा दृश्य

स्थान—कुरुक्षेत्र का मैदान।

समय—प्रभात।

(सशस्त्र परशुराम का प्रवेश। शरीर पर कवच और हाथ में धनुर्बाण। पीठ पर तरकश।)

परशु : सूर्योदय हो रहा है। भगवान भास्कर गुरु और शिष्य के इस विचित्र युद्ध को देखने के लिए आ गये हैं। आज कई दिनों से यह युद्ध चल रहा है। पर परिणाम का पता ही नहीं चलता। सारा संसार इस युद्ध को देख कर विस्मित है। भीष्म मेरा शिष्य है। उसके रणकौशल को देख कर हृदय प्रसन्न हो जाता है। भीष्म ने ब्रह्मचर्यव्रत पालन करने की प्रतिज्ञा की है। मैं उसके व्रत को भंग करना चाहता हूँ। क्या मेरे लिए यह उचित है?—लेकिन मैंने अम्बा को वचन दिया है। उस वचन की रक्षा तो करनी ही होगी। लो, सामने से भीष्म आ रहा है।

(भीष्म का सशस्त्र प्रवेश। परशुराम के चरण छूते हैं।)

भीष्म : शिष्य को विजयी होने का आशीर्वाद दीजिये गुरुदेव।

परशु : भीष्म, मेरी शुभकामना तुम्हारे साथ है। लेकिन कुरुक्षेत्र के इस मैदान में तुम मेरे शत्रु हो, प्रतिद्वन्द्वी हो। इसलिए मैं तुम्हें विजयी होने का आशीर्वाद नहीं दे सकता।

भीष्म : क्या आप मेरी पराजय की कामना करते हैं भार्गव?

परशु : इसे मेरे मुँह से इतना स्पष्ट न कहलाओ भीष्म। कौन गुरु अपने शिष्य की पराजय की कामना करेगा? शिष्य को पराजित करके कौन गुरु अपना यश चाहेगा?—लेकिन इस पर बातचीत व्यर्थ है। हम दोनों, एक दूसरे से, अपने सिद्धान्त की रक्षा के लिए युद्ध कर रहे हैं।

भीष्म : आप ब्राह्मण हैं गुरुदेव! आपके शरीर पर मैं कई दिनों से आघात कर रहा हूँ। इस पाप का निवारण कैसे होगा?

परशु : यह पाप नहीं है भीष्म। जब मैंने हथियार धारण किया है तो मेरा ब्राह्मणत्व कहाँ रहा?—तुम ब्राह्मण या आचार्य पर नहीं, बल्कि एक योद्धा पर आक्रमण कर रहे हो।

भीष्म : इस युद्ध का अन्त कैसे होगा?

परशु : मेरा या तुम्हारा मरण ही इस युद्ध को समाप्त कर सकता है।

भीष्म : लेकिन भार्गव, आप अमर हैं। आपको कोई नहीं मार सकता। मेरी मृत्यु भी मेरे अधीन है। फिर मरण का प्रश्न कहाँ उठता है?—इसका अर्थ यह हुआ कि यह युद्ध चलता जायेगा वर्षों तक, युगों तक। संसार नष्ट हो जायगा, पर यह युद्ध अनन्त काल तक चलता जायेगा।

परशु : भीष्म, सूर्यदेव युद्ध देखने के लिए आ गये। प्रारम्भ करो युद्ध। पहले तुम बाण चलाओ।

भीष्म : जो आज्ञा।

(मन्त्र पढ़ कर बाण चलाते हैं । परशुराम भी मन्त्र पढ़कर बाण मारते हैं। यह क्रम कुछ देर तक चलता रहता है। अन्धकार, फिर प्रकाश।)

परशु : भीष्म, हम दोनों का युद्ध कई दिनों से चल रहा है। सारा संसार भय और विस्मय में है। मैं आज तुम्हें पराजित करूँगा।

भीष्म : भृगुवंशीय महर्षि परशुराम का शिष्य कायर नहीं है गुरुदेव। आप मुझे पराजित नहीं कर सकते।

परशु : पराजित नहीं कर सकते? *(अट्टहास)*

भीष्म : नहीं कर सकते, बल्कि मैं चाहूँ तो आज आपका पतन हो सकता है।—मेरे पास वसुओं का दिया हुआ एक दिव्य बाण है। इसका प्रतिकार आपके भी पास नहीं है। यदि आप अनुमति दें तो इस दिव्य बाण का प्रयोग करूँ।

परशु : मैं तुम्हारा शत्रु हूँ भीष्म। यदि तुम उचित समझो तो उस बाण का प्रयोग कर सकते हो।

भीष्म : अच्छी बात है। *(एक नया बाण निकाल कर अभिमन्त्रित करते हैं।)* सावधान भार्गव! अब इससे आपका पतन निश्चित है।

(धनुष पर बाण चढ़ा कर चलाना चाहते हैं। घन गर्जन। अन्धकार। फिर बिजली की चमक। दूर-दूर से अनेक स्वर सुनाई पड़ते हैं—)

कई स्वर: रुक जाओ भीष्म। इस बाण का प्रयोग न करो।

भीष्म : कौन मुझे रोक रहा है?

एक स्वर : मैं तुम्हारी जननी गंगा हूँ।

दूसरा स्वर : मैं तुम्हारा पिता शान्तनु हूँ।

तीसरा स्वर : मैं परशुराम का पिता जमदग्नि हूँ।

(इस तरह सभी दुहराते हैं, फिर सामूहिक स्वर में बोलते हैं। घन-गर्जन और बिजली की चमक पूर्ववत्।)

एक स्वर : बेटा भीष्म, भार्गव से क्षमा माँगो। महर्षि परशुराम, भीष्म को क्षमा कीजिये।

(पूर्ववत् प्रकाश)

भीष्म : *(धनुर्बाण फेंक कर परशुराम के सामने नतजानु होते हैं)* गुरुदेव, अपने उद्धत् शिष्य को क्षमा कीजिये। मैं इस बाण का प्रयोग नहीं करूँगा। मैं गुरुहन्ता का अपयश न लेकर स्वेच्छा से मरना चाहूँगा।

परशु : उठो भीष्म! मुझे तुम पर गौरव है। मैं तुम्हारी परीक्षा ले रहा था। वसुओं के बाण का प्रहार मैं सहन नहीं कर पाता। लेकिन तुमने जिस महानता का परिचय दिया है, उससे मैं फूला नहीं समाता। देवव्रत, तुम भीष्म हो और भीष्म ही रहोगे। मैं तुम्हारे सन्मुख पराजित हूँ वीर। मेरा आशीर्वाद सदा तुम्हारे साथ रहेगा।

(आशीष देते हैं।)

—: o :—

पृष्ठ-५५ (४८ पुनः)

तीसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान—घोर जंगल।
समय—रात।

(अम्बा तपस्विनी के वेश में साधना में लीन है।)

अम्बा : नमो शिव य !
नमो शिवाय !

(बार-बार इसका उच्चारण कर रही है। कुछ देर बाद एक भयंकर शब्द होता है। देवादिदेव महादेव प्रकट होते हैं। हाथ में त्रिशूल, कमर में मृगछाला, सिर पर जटा, गर्दन में सर्प। महादेव और अम्बा के चेहरे पर बारी-बारी से प्रकाश।)

महादेव : नेत्र खोलो अम्बा। मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ। वर माँगो।

(अम्बा नेत्र खोलती है)

अम्बा : कौन ? देवादिदेव महादेव ? भगवान शिव ? अम्बा का प्रणाम स्वीकार कीजिये।

(प्रणाम करती है)

महादेव : तुम्हारी तपस्या से मैं बहुत प्रसन्न हूँ अम्बा। वर माँगो।

अम्बा : भगवन, यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो मुझे केवल एक वर दें।

महादेव : कौन-सा वर ?

अम्बा : भीष्म का मरण मेरे द्वारा हो—बस यही वर मांगती हूँ।

महादेव : अम्बा, यह वर न माँगो। ऐसा वर माँगना तुम्हारे लिए उचित नहीं है।

अम्बा : भगवन्, भीष्म ने स्वयंवर-सभा में मेरा हरण किया, पर मुझसे विवाह न किया। परशुराम ने मेरा पक्ष लेकर भीष्म से युद्ध किया, पर वे हार गये। इसलिए मैंने घोर तपस्या की। जिस व्यक्ति के कारण मेरा जीवन नष्ट हुआ, उसका नाश मेरे ही द्वारा हो—यही मेरी तपस्या का उद्देश्य है।

महादेव : अम्बा, तुम नारी हो। प्रेम और क्षमा तुम्हारे गुण होने चाहियें।

अम्बा : आप ठीक कहते हैं। लेकिन नारी भी मनुष्य है। नारी अबला नहीं, सबला है। वह प्रेम करती है, क्षमा की मूर्त्ति बन सकती है, साथ ही वह प्रतिशोध भी ले सकती है। आपकी सृष्टि में यह एक नवीन उदाहरण होगा कि भीष्म-जैसे पुरुष से बदला लेने के लिए अम्बा-जैसी सामान्य नारी ने कई वर्षों तक तपस्या की।

महादेव : जानता हूँ, सब कुछ जानता हूँ अम्बे। लेकिन ऐसा वर न माँगो—यह मेरा आग्रह है।

अम्बा : तो क्या मेरी साधना निष्फल जायेगी ?—मेरी प्रतिहिंसा की भावना सो जायेगी ?—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। यदि आप वर नहीं दे सकते तो लौट जायें भगवन्।

महादेव : तुम और कुछ भी माँग लो। मैं दे सकता हूँ। यदि तुम विवाह करना चाहो तो भीष्म से भी उत्तम पुरुष मैं तुम्हें दे सकता हूँ।

अम्बा : विवाह ? (अट्टहास) नहीं, विवाह करने की कामना मर चुकी। अब तो रक्त चाहिये—भीष्म का गरम लाल रक्त। मैं अपने हाथ से भीष्म की हत्या करना चाहती हूँ—अपने हाथ से।

महादेव : भीष्म को इच्छामृत्यु का वरदान है अम्बे।

अम्बा : जानती हूँ।—लेकिन मुझे और कुछ नहीं चाहिये। आप चले जायें। मैं फिर तपस्या करूंगी। यदि इस जन्म में वर न मिला तो अगले जन्म में भी तपस्या करूँगी। आप भी तो नियम के बन्धन में हैं। आपको वर देना ही होगा।

महादेव : फिर कहता हूँ अम्बा। मान जाओ।

अम्बा : मेरा तप व्यर्थ नहीं जायेगा भगवन्।

महादेव : अम्बा, तुमने मुझे निरुत्तर कर दिया। बोलो, क्या चाहती हो ?

अम्बा : भीष्म का वध मेरे द्वारा हो—केवल यही।

महादेव : यही होगा अम्बे। भीष्म का मरण तुम्हारे द्वारा होगा। लेकिन एक बात।

अम्बा : क्या भगवन् ?

महादेव : इस जन्म में तुम भीष्म का वध नहीं कर सकोगी। अगले जन्म में राजा द्रुपद के घर में तुम्हारा जन्म होगा। संसार तुम्हें द्रुपद-पुत्र शिखण्डी के रूप में जानेगा। शिखण्डी के रूप में ही तुम भीष्म पर आघात करोगी और रणभूमि में भीष्म का पतन होगा।

अम्बा : स्वीकार है भगवन्। अम्बा के रूप में न सही, शिखण्डी के रूप में ही भीष्म का नाश तो कर सकूँगी।

(महादेव अन्तर्ध्यान होते हैं)

अम्बा : (*अट्टहास*) प्रतिहिंसा ! शिखण्डी के हाथों भीष्म का पतन ! भीष्म का मरण ! (*अट्टहास*) मैं आज ही चिता सजा कर प्राणत्याग करूँगी—आज ही। (*अट्टहास। दृश्य-परिवर्त्तन। चिता जल रही है। अट्टहास करती अम्बा चिता में कूदती है।*)

—:o:—

दूसरा दृश्य

स्थान—कौरव-शिविर का एक भाग।

समय—रात।

(पितामह भीष्म चिन्तित भाव में टहल रहे हैं। श्वेत केश। अतिवृद्ध, पर चेहरे से वीरता और तेज प्रस्फुटित हो रहे हैं।)

भीष्म : कौरवों और पाण्डवों का यह महाभारत-युद्ध नौ दिनों से चल रहा है। हजारों वीर रोज हताहत हो रहे हैं। लेकिन युद्ध का परिणाम समझ में नहीं आता। मैंने कौरवों का नमक खाया है, इसलिए उन्हीं की ओर से युद्ध कर रहा हूँ। मन पाण्डवों की ओर है, लेकिन लड़ता हूँ कौरवों की ओर से। लो, कुरुराज दुर्योधन आ गया।

(हस्तिनापुर-नरेश दुर्योधन का प्रवेश। पितामह के चरणों में, झुक कर, अभिवादन करते हैं।)

भीष्म : दुर्योधन, मैं तुम्हारी ही याद कर रहा था।

दुर्योधन : मेरी याद ?—क्यों पितामह ?

भीष्म : सोच रहा था कि महाभारत का यह भीषण संग्राम कैसे समाप्त होगा ?

दुर्योधन : पितामह, आप सोच रहे हैं ? आश्चर्य !

भीष्म : हाँ दुर्योधन, यह युद्ध जितना शीघ्र समाप्त हो जाये उतना ही अच्छा है।

दुर्योधन : पितामह, आप चाहें तो यह युद्ध एक दिन में समाप्त हो सकता है।

भीष्म : कैसे ?

दुर्योधन : पाँचो पाण्डवों का संहार करके।

भीष्म : नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकता।

दुर्योधन : मैं जानता था। क्या मैं पितामह से पूछ सकता हूँ कि पाण्डवों का संहार क्यों नहीं करना चाहते ?

भीष्म : दुर्योधन, कौरव और पाण्डव मेरे लिए समान हैं। तुमलोगों ने अन्याय से उनकी सत्ता का हरण किया है, जुए में शकुनी के पासों से उनकी मान-मर्यादा नष्ट की है, शर्त्त के मुताबिक वे बारह वर्षों तक वनों में रहे। एक वर्ष तक अज्ञातवास में रहे। अब उचित था कि उनका हारा हुआ राज्य उन्हें वापस करते। लेकिन तुमने इनकार कर दिया और बैठे-बिठाये यह भयंकर झगड़ा मोल लिया।

दुर्योधन : पितामह, अब बीती हुई बातों को याद करके क्या होगा ? सामने है युद्ध, कुरुक्षेत्र का विशाल मैदान और मरने-मारने के लिए खड़ी सेना जिसमें पृथ्वी के कोने-कोने से राजागण अपनी-अपनी शक्ति की परीक्षा देने के लिए तैयार हैं।

भीष्म : दुर्योधन, तुमने नौ दिनों तक युद्ध किया। परिणाम क्या निकला ?—असंख्य वीरों, की मृत्यु। हार-जीत का निर्णय न हो सका।

दुर्योधन : पितामह, आप केवल एक काम करें।

भीष्म : कौन सा काम ?

दुर्योधन : अर्जुन का वध। शेष को मैं देख लूँगा।

भीष्म : यह असम्भव है दुर्योधन। अर्जुन के सारथी स्वयं श्रीकृष्ण हैं। अर्जुन के रथ पर हनुमान हैं। अर्जुन और श्रीकृष्ण नर-नारायण के अवतार हैं। अर्जुन का वध असम्भव है।

दुर्योधन : यह गलत बात है। सच्ची बात यह है कि आप अर्जुन पर आघात करना नहीं चाहते।

भीष्म : दुर्योधन ! तुम भीष्म का अपमान कर रहे हो।

दुर्योधन : मैं सच कह रहा हूँ। यदि आप चाहें तो अर्जुन का वध हो सकता है, हमारी जीत हो सकती है। आप क्यों डरते हैं पितामह ?—आपको तो इच्छामृत्यु का वर प्राप्त है।

भीष्म : इच्छामृत्यु ?—यह मेरे लिए वर नहीं, अभिशाप सिद्ध हुआ। आज यदि मैं जीवित नहीं रहता तो तुम्हारे पाप में सम्मिलित नहीं होना पड़ता।

दुर्योधन : यह आप क्या कह रहे हैं पितामह ?—आप हमारे लिए पूज्य हैं। यही कारण है कि आप कौरवों के सेनापति हैं। आपका सम्मान तो पाण्डव भी करते हैं।

भीष्म : हाँ, पाण्डव सम्मान करते हैं। तुमसे अधिक सम्मान करते हैं। लेकिन मैं उनके लिए कुछ न कर सका।

दुर्योधन : मेरे लिए क्या आदेश होता है ?

भीष्म : जाओ दुर्योधन, विश्राम करो। कल महाभारत-युद्ध का दसवाँ दिन होगा। कल भयंकर युद्ध होगा। एक बड़ी घटना घटेगी। जाओ, आराम करो। *(दुर्योधन का प्रणाम करके प्रस्थान। भीष्म टहलते हैं।)*

भीष्म : आकाश में मेघ घिर आये हैं। चारों ओर अन्धकार छा गया है। कल का युद्ध ! भयंकर युद्ध ! दुर्योधन ने मेरा अपमान किया है। नहीं, अब और नहीं। समय के साथ-साथ शरीर भी पुराना पड़ गया। *(एक ओर प्रस्थान। दूसरी ओर से श्रीकृष्ण और अर्जुन का प्रवेश।)*

अर्जुन : यहाँ पितामह तो नहीं हैं।

कृष्ण : आ रहे होंगे।

अर्जुन : घनश्याम, मेरे साहस ने जवाब दे दिया। मैं कुछ न कह सकूँगा।

कृष्ण : अर्जुन, यही तुममें सबसे बड़ी दुर्बलता है। युद्धक्षेत्र में भी तुम अनेक बार शिथिल पड़ गये हो। गीता का उपदेश दुहराना पड़ेगा क्या ?

अर्जुन : नहीं भगवन्, भीष्म हमारे पितामह हैं। उनकी गोद में मैंने बचपन बिताया है। मैं उनपर आघात करता हूँ तो लगता है, अपने ऊपर आघात कर रहा हूँ। वे वृद्ध हैं। हमलोगों के लिए पूज्य हैं।

कृष्ण : कालचक्र की अपनी गति होती है अर्जुन। उसे किसी से मोह और ममता नहीं होती। फिर कहता हूँ कि भीष्म मेरी दृष्टि में मर चुके हैं।

अर्जुन : भीष्म मर चुके हैं ! आप क्या कहते हैं भगवन् ? उन्हें तो इच्छामृत्यु का वरदान है।

कृष्ण : उन्हें इच्छामृत्यु ही मिलेगी अर्जुन।

अर्जुन : कैसे भगवन् ?

कृष्ण : भीष्म आ रहे हैं। उन्हीं से सुन लेना।

(भीष्म का प्रवेश)

भीष्म : योगेश्वर श्रीकृष्ण और अर्जुन का स्वागत है।

कृष्ण : पितामह, हमलोग आपके दर्शन करने चले आये। अर्जुन के मन में व्यथा है। मेरे समझाने का कोई प्रभाव उस पर नहीं पड़ता।

भीष्म : कैसी व्यथा अर्जुन ?

अर्जुन : पितामह, मैं आज कई दिनों से आपके शरीर पर आघात कर रहा हूँ। लगता है कि वह आघात मेरे ही शरीर पर होता है। यही व्यथा है।

भीष्म : अर्जुन, रणक्षेत्र में मैं तुम्हारा शत्रु हूँ। क्षत्रिय युद्ध में किसी को अपना नहीं मानते। इसलिए व्यथा का कोई कारण नहीं, पश्चात्ताप की कोई आवश्यकता नहीं।

अर्जुन : पितामह, आपने नौ रोज में मेरी सेना के असंख्य वीरों का वध कर दिया। योद्धा आपके सन्मुख युद्ध करने से भय खाते हैं। ऐसी दशा में मेरी विजय कैसे होगी ?

भीष्म : जहाँ धर्म है, वहाँ श्रीकृष्ण हैं और जहाँ श्रीकृष्ण हैं, वहीं विजय है। (कुछ हँस कर) क्यों भगवन् ?

कृष्ण : आप ठीक कहते हैं पितामह। दुर्योधन ने अहंकार में भर कर यह युद्ध छेड़ा है। उस अहंकार को समाप्त करना आवश्यक है।

अर्जुन : पितामह, आप जानते हैं कि दुर्योधन अन्यायी है। फिर आपने उसका पक्ष क्यों लिया ?

भीष्म : मैंने दुर्योधन का अन्न खाया है बेटे।

अर्जुन : अन्न ? आपने दुर्योधन का अन्न नहीं खाया है, बल्कि वह आपका अन्न खा रहा है। यह राज्य किसका है ?—आपका। आप अभी भी चाहें तो दुर्योधन को सिंहासन से उतर जाने का आदेश दे सकते हैं।

भीष्म : समय के प्रवाह में वह सब चला गया अर्जुन। मैंने कभी राजा बनने की कल्पना नहीं की।

कृष्ण : यही तो आपका गौरव है पितामह। आपने सब कुछ पाकर भी तिनके की तरह छोड़ दिया। आज कौरव या पाण्डव सेना में कोई ऐसा वीर नहीं है जो आपकी समता में आये। शायद इस बात से दुर्योधन लाभ उठा रहा है।

भीष्म : विजय पाण्डवों की होगी—यह भविष्य कह रहा है। जिस पक्ष में जनार्दन हों, उस पक्ष की हार हो ही नहीं सकती।

कृष्ण : लेकिन मैंने तो इस युद्ध में शस्त्र-धारण न करने की प्रतिज्ञा की है पितामह।

भीष्म : (कुछ हँस कर) जो सारे विश्व को चला रहा है, जिसके आदेश से सूर्योदय और सूर्यास्त होते हैं, उसकी माया को समझना कठिन है भगवन्।

कृष्ण : पितामह, आप जब तक युद्ध से विरत् नहीं होते, पाण्डवों का ह्रास ही होगा।

भीष्म : तो आप मेरा पतन चाहते हैं ?

कृष्ण : हाँ, चाहता हूँ।—अब आप ही उपाय बतायें।

भीष्म : क्या आप नहीं बता सकते भगवन् ?

कृष्ण : आपके मुख से सुनना अच्छा रहेगा।

भीष्म : अर्जुन, कल मेरा पतन होगा। लेकिन तुम्हें एक काम करना होगा।

अर्जुन : कौन सा काम पितामह ?

भीष्म : तुम्हारी सेना में राजा द्रुपद का पुत्र शिखण्डी है। कल उसे अपने आगे रखो। वह मुझ पर आक्रमण करेगा, लेकिन मैं उस पर आक्रमण नहीं करूँगा।

अर्जुन : क्यों पितामह ?

भीष्म : शिखण्डी पूर्वजन्म में अम्बा नामकी एक नारी था। उसने महादेव से मेरे वध करने का वरदान पाया है। शायद शिखण्डी इस बात को नहीं जानता, लेकिन मैं जानता हूँ। मैं स्त्री पर हथियार नहीं उठाता। शिखण्डी मेरी दृष्टि में एक स्त्री ही है। अतः उस पर मैं हथियार नहीं उठाऊँगा। इसे जान लो।

अर्जुन : अच्छी बात है। कल ऐसा ही होगा।

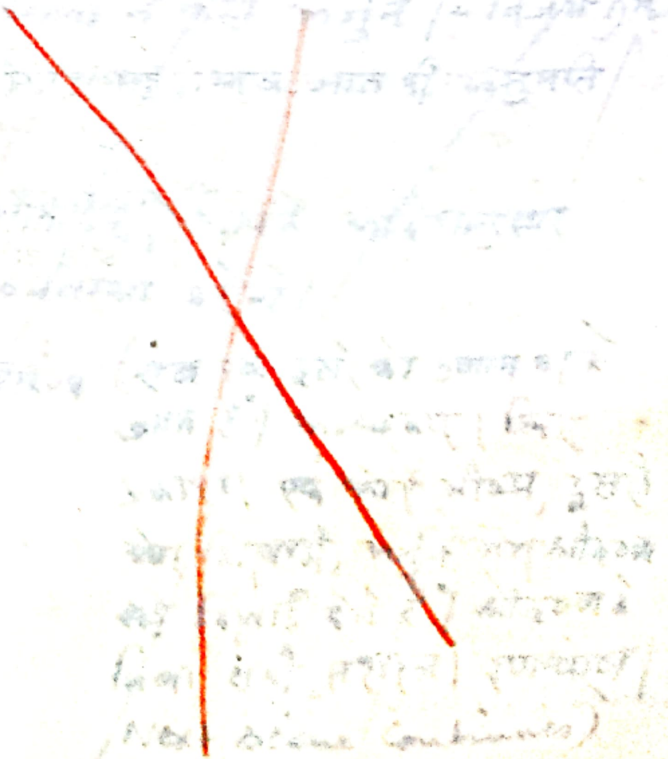
श्रीकृष्ण : चलो अर्जुन। अब रात थोड़ी शेष है। विश्राम करें। कल की व्यवस्था भी करनी है।

(दोनों का प्रस्थान)

भीष्म : अन्धकार ! विराट् अन्धकार ! उसके मुख में सारा संसार लुप्त होता जा रहा है। कुछ भी शेष नहीं रहेगा—कुछ भी नहीं।

(सोचते हुए प्रस्थान)

—:०:—



तीसरा दृश्य

स्थान—कुरुक्षेत्र का मैदान।
समय—दोपहर के बाद का समय।

(युद्ध हो रहा है। रणघोष। आमने-सामने रथों पर सवार भीष्म, अर्जुन, श्रीकृष्ण, शिखण्डी आदि हैं। पितामह भीष्म रक्ताक्त हैं। कई बाण उनके शरीर में चुभे हैं।)

भीष्म : अर्जुन, मैंने आज फिर तुम्हारे दस हजार सैनिकों का वध किया।

अर्जुन : पितामह, आपकी वीरता की बराबरी हम नहीं कर सकते। फिर भी ऐसा लगता है कि आज आपका यह अन्तिम युद्ध है।

भीष्म : तुम शिखण्डी को हटा लो अर्जुन। शिखण्डी पूर्वजन्म में स्त्री था। मैं इसे अब भी स्त्री मानता हूँ। इससे युद्ध करना मुझे अच्छा नहीं लगता।

शिखण्डी : शान्तनुनन्दन, आज मैं आपका वध करूँगा। पता नहीं क्यों, मेरे मन में आज बड़ा उत्साह है, बड़ी प्रसन्नता है।

श्रीकृष्ण : द्रुपदकुमार, बाण मारते जाओ।

शिखण्डी : सावधान पितामह!

(बाण मारते हैं)

भीष्म : मैं तुम पर आक्रमण नहीं कर सकता। अर्जुन, तुम शिखण्डी के पीछे से क्यों वार करते हो?—सामने आओ।
(धनुष पर तीर रख कर लक्ष्य साधते हैं)

कृष्ण : अर्जुन, रुको मत। बाण मारते जाओ। पितामह तुम पर आक्रमण नहीं कर सकते। सामने शिखण्डी है।
(अर्जुन और शिखण्डी बाण मारते हैं। भीष्म धनुर्बाण रख देते हैं।)

भीष्म : नहीं, आक्रमण नहीं करूँगा। थक गया हूँ। विश्राम चाहता हूँ।

कृष्ण : द्रुपदकुमार, बाण मारते जाओ। अर्जुन, यही समय है। रुको मत। बाण मारते जाओ।

(दोनों बाण मारते हैं)

भीष्म : नहीं अब और नहीं। शरीर शिथिल हो गया। सारथी, कुरुराज दुर्योधन को सूचना दे दो कि महाभारत के युद्ध में भीष्म का पतन हो गया। (रथ से नीचे गिरते हैं।)

कृष्ण : अर्जुन, युद्ध बन्द करो। पितामह गिर पड़े हैं। उनके पास जाओ।

(सब दौड़कर भीष्म के पास जाते हैं।)

दुर्योधन : (प्रवेश करके) पितामह! पितामह!

भीष्म : दुर्योधन, मैंने तुम्हारे नमक का मूल्य अपना रक्त देकर चुकाया। घायल हो गया हूँ। अब युद्ध नहीं कर सकता।

दुर्योधन : *(रोते हुए)* पितामह, मेरे शिविर में चलिये। मैं आपका उपचार कराऊँगा।

भीष्म : नहीं बेटे ! अब और नहीं ! मैं यहीं बाणशय्या पर रहूँगा। मुझे इच्छामृत्यु का वरदान है। अभी मरूँगा नहीं। सूर्य जब उत्तरायण होंगे तभी मैं मृत्यु को प्राप्त करूँगा। तुमलोग चिन्ता न करो।

दुर्योधन : मेरे लिए क्या आज्ञा होती ?

भीष्म : दुर्योधन, मैंने तुमसे कहा था कि पाण्डवों से मेल कर लो। आधा राज्य इन्हें दे दो। पर तुम न माने। जब ये भीष्म को परास्त कर सकते हैं, जिसे परशुराम भी परास्त न कर सके, तो सब कुछ कर सकते हैं। फिर कहता हूँ, पाण्डवों से मेल करो।

दुर्योधन : नहीं पितामह, ऐसा आदेश न दीजिये। दुर्योधन कायर नहीं है। वह युद्ध करेगा।

भीष्म : मैं जानता हूँ, तुम अवश्य युद्ध करोगे। तो फिर वही करो—करो युद्ध। वीरभोग्या वसुन्धरा को प्रसन्न करो।

अर्जुन : *(रोकर)* पितामह, मुझे क्षमा कीजिये। मैंने घोर अपराध किया है।

भीष्म : चिन्ता न करो अर्जुन। काल की गति को कौन रोक सकता है ? भगवान कृष्ण, मुझे क्षमा कीजिये। आप लीलामय ईश्वर हैं। आपकी माया को कौन समझ सकता है ? हम आपको प्रणाम करते हैं।

(प्रणाम करने का भाव। कृष्ण आशीष देते हैं। अन्धकार।)

(पर्दा गिरता है।)

★::★

समाप्त